संत [illegible]
[illegible] दास

संत कवि मलूकदास

★

डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित
एम० ए०, एल एल० बी०, पी० एच० डी०, डी० लिट्,

हिन्दी-विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

★

संत-सूफी साहित्य-संस्थान,
अखिल भारतीय संत मलूकदास
स्मारक समिति
प्रयाग

प्रकाशक :
संत-सूफी साहित्य संस्थान,
अ० भा० संत मलूकदास स्मारक समिति
७९, कूँचा राय गंगा प्रसाद,
इलाहाबाद—३

चित्रकार—नन्हूराम गौतम

मूल्य—दो रुपया

प्रथम संस्करण—१०००
मलूक-जयंती, बैशाष कृष्ण ५,
संवत् २०२२ विक्रमी
[२१ अप्रैल १९६५]

मुद्रक :
प्रेम नारायण मेंहरोत्रा
विकास प्रेस, कल्याणी देवी,
इलाहाबाद—३

भूमिका

इस देश के सांस्कृतिक इतिहास में, जो महत्वपूर्ण परिच्छेद हैं, उनमें संतों की वाणी का विशिष्ट योग रहा है। यह इसलिये संभव हो सका कि, यह संत वाणी जन-जीवन के धरातल से उठकर उदात्त अनुभूति में परिणित हुई हैं। इस दृष्टि से संतों द्वारा जो साहित्य प्रस्तुत हुआ है, वह विविध परिस्थितियों में विविध प्रकार से नियोजित हो सका और जिस संदर्भ में उसकी उपयोगिता सब से अधिक समझी गई, उसी संदर्भ में संत-वाणी का प्रभावशाली शब्द गूंज उठा। जब सांस्कृतिक दृष्टि से संत-वाणी पर विचार किया जाता है तो वह एक से अनेक रूपा हो जाती है, और इस भांति जहां वह जन जीवन में शान्ति की शीतलधारा प्रवाहित करती है, वहां दूसरी ओर, बड़ी-से-बड़ी क्रांति करने की शक्ति स्वयमेव रखती है। उदाहरण के लिए कबीर से लेकर अन्य सन्तों की वाणी जहां मानव जीवन को विस्तृत मरुभूमि में मंदाकिनी की शीतलता और पवित्रता का मंगलाचरण प्रस्तुत करती रही, वहां उसने पुरानी अन्ध-परम्पराओं तथा जड़ी भूत संस्कारों के उत्तुंग शिखरों को भी अपने प्रवाह में बहा दिया। इन संतों की परम्परा में सत मलूकदास भी ऐसे ही विशिष्ट सन्त थे जिनकी वाणी आज की साधना के पावन तटों का स्पर्श करती हुई अपनी सुमधुर ध्वनि में गुंजित हो रही है। यह सत्य है कि धर्म के क्षेत्र में चलाया गया कोई भी पंथ कालान्तर में अनेक रूढ़ियों से ग्रस्त हो जाता है तथा उस पंथ से सम्बन्धित अनेकानेक ग्रन्थ क्षेपकों से बुरी तरह भर दिये जाते हैं। इस बात की सम्भावना है कि सन्त मलूकदास ने जितने भी ग्रन्थों की रचना की है, उनकी प्रामाणिकता साहित्य के विद्वानों के द्वारा संदिग्ध समझी जाय, किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि उनके ग्रन्थों का एक स्थान पर संग्रह कर उनके अध्ययन से संत मलूकदास की वाणी की वास्तविकता को पहिचान और परख सही ढङ्ग से की जा सके।

अ० भा० संत मलूकदास स्मारक समिति इसी दृष्टि से संगठित की गई है कि उसके द्वारा मलूकदास के अलभ्य साहित्य का एक अत्यन्त प्रामाणिक संग्रह प्रस्तुत किया जा सके। मलूकदास के साहित्यिक एवं धार्मिक व्यक्तित्व को समझने में उनके द्वारा रचित काव्य निश्चय ही सहायक हो सकेगा। साथ ही, उन पर लिखे गये प्रामाणिक ग्रंथों का प्रकाशन करना भी इस दिशा में स्पृहणीय माना जा सकेगा। इसी दृष्टि से, सन्त मलूकदास स्मारक समिति की ओर से यह ग्रन्थ प्रस्तुत किया जा रहा है। इसके लेखक डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित, लखनऊ विश्वविद्यालय के आचार्य हैं। उनकी सन्त साहित्य में विशेष प्रगति है और उस प्रगति से मेरा परिचय अनेक रूपों में उनसे होता रहा है। यह ग्रन्थ इस सम्बन्ध में किये गये उनके खोज सम्बन्धी प्रबन्ध ग्रन्थ पर आधारित है। मुझे विश्वास है कि डा० दीक्षित के इस खोज पूर्ण तथा विवेचना और उपलब्धियों से मंडित ग्रंथ का उचित मूल्यांकन धार्मिक और साहित्यिक दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से हो सकेगा।

साकेत—
मलूक जयन्ती
बुधवार बैशाख कृष्ण पंचमी
संवत्-२०२२

डा० रामकुमार वर्मा
एम० ए०, पी० एच० डी०
अध्यक्ष
अ० भा० संत मलूकदास
स्मारक समिति, प्रयाग

निवेदन

हिन्दी के सन्त कवियों में कबीरदास युग प्रवर्तक व्यक्तित्व लेकर हिन्दी साहित्य तथा धर्म साधना के क्षेत्र में अवतरित हुआ। व्यक्तित्व एवं कृतित्व की दृष्टि से कबीरदास हिन्दी साहित्य तथा साधना के क्षेत्र में असाधारण महाकवि एवं महापुरुष है। "मसि कागद छूयौ नही कलम गह्यो नही हाथ" की उद्घोषणा करने वाला उदार चेता मनस्वी प्रायः ८०० वर्षों से चिन्तन, मनन, अध्ययन, अनुसंधान तथा अनुकरण का विषय बना हुआ है। साहित्य, जीवन, धर्म साधना तथा समाज में उस असाधारण एवं आश्चर्यजनक महात्मा ने सर्वथा अभिनव मानदण्डों की संस्थापना की। प्रतिभा की दृष्टि से वह सर्वथा असामान्य तथा अद्वितीय था। स्पष्टवादिता एवं अभिव्यक्ति की सच्चाई एवं ईमानदारी की दृष्टि से वह सर्वथा मौलिक और सर्वप्रिय कलाकार था। वह जनता का कवि, गायक तथा चिन्तक था। अज्ञानांधकार को समाप्त करने के लिये वह सिकंदर लोदी के संघर्ष में आया। जनता के शोषक पन्डित-पन्डे, मुल्ले और मौलवियों के पास इतनी शक्ति कहाँ कि उस व्यक्तित्व के साथ प्रति द्वन्द्विता करते। सन्त कबीर ने जिस विचार धारा को जन्म दिया, जिस चिन्तन परम्परा की प्रस्थापना की उसका अंतिम व्यक्तित्व, अंतिम कड़ी है सन्त कवि चरनदास। मलूकदास इसी परम्परा में अवतरित एव आविर्भूत महान साधक एवं कवि है। इनका आविर्भाव संवत् १६३१ वि० में हुआ। गोस्वामी तुलसीदास ने इसी समय मानस की रचना प्रारम्भ की थी। दादू, सुन्दरदास, रज्जब, मीरा, सूरदास, नन्ददास, केशवदास सब मलूकदास के समकालीन कवि थे। समाजसुधारक तथा तत्व चिन्तक के रूप में भी हमारे आलोच्य कवि का सम्मान्य स्थान है। अद्वैत ब्रह्मोपासना का वह राजमार्ग जिसका निर्माण कबीरदास ने किया था, मलूकदास द्वारा परिपुष्टता को सम्प्राप्त हुआ। इस महान कवि का विशेष अध्ययन पी० एच० डी० उपाधि के हेतु लेखक ने लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में सन् १९४७ में प्रस्तुत किया था। उक्त अध्ययन का प्रसार टाइप किये हुए प्रायः ६५० पृष्ठों में सम्पन्न हुआ था। मलूकदास पर यह सर्व प्रथम वैज्ञानिक, सुव्यवस्थित, निष्पक्ष आलोचनात्मक शोध प्रबन्ध सन् १९४८ में 'डाक्टेरेट' उपाधि के लिये स्वीकृत किया गया। यह पुस्तिका उसी शोध प्रबन्ध का अत्यन्त संक्षिप्त रूप है। इसमें अनेक प्रसङ्ग, अनेक परिछेद इसलिये सम्मिलित नहीं किए जा सके कि मलूकदास स्मारक समिति के पास इतने साधन नहीं हैं कि अधिक विस्तृत अध्ययन प्रकाशित कर सके। महंत नानकचन्द जी का स्नेहपूर्ण आदेश का परिपालन करने के लिए यह परिचयात्मक पुस्तिका आपके समक्ष प्रस्तुत की जा रही है। उनका यह प्रयत्न न होता तो यह पुस्तिका भी प्रकाश में न आ पाती। मलूकदास विषयक मेरा शोध प्रबन्ध आज तक न प्रकाशित हो सका। इसका भी कारण है। 'राष्ट्रभाषा' के विद्वान हिन्दी के प्रकाशन संस्थाओं तथा प्रकाशकों से परिचत है उपन्यास, कहानी तथा नाटक और उनसे सम्बंधित पिष्टपेषण से भरे हुए शोध प्रबन्ध तीव्र गति से प्रकाशीत होते जा रहे हैं परन्तु हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के आधार पर प्रस्तुत मौलिक एवं विद्वानों से समर्थित विशेष शोध ग्रन्थों की ओर कोई ध्यान नहीं देते। अपने शोध प्रबन्ध के प्रकाशन के लिये लेखक स्व० बाबू पुरुषोत्तमदास टण्डन डा० सम्पूर्णानन्द, प० कमलापति त्रिपाठी, डा०रामप्रसाद त्रिपाठी जैसे व्यक्तियों हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग जैसी संस्थाओं तथा अनेक प्रकाशकों के पास गया। परन्तु कहीं से कोई प्रोत्साहन भरा स्वर मुखरित न हुआ। प्रांतीय सरकार की हिन्दी समिति में भी सुनवाई न हो सकी। प्रकाशकों में लेखक किताबमहल (इलाहाबाद) के अध्यक्ष

श्री निवास अग्रवाल जी का अनुग्रहीत है जिन्होंने एक बार ग्रन्थ प्रकाशन का कार्य स्वीकार कर लिया, अनुबन्ध पत्र पर उभय पक्षों के हस्ताक्षर भी हो गये। परन्तु तुरंत ही अग्रवाल जी को हृदय का भीषण रोग उठ खड़ा हुआ। अतः वह ग्रन्थ आज तक न प्रकाशित हो सका। सच बात यह है मलूकदास किसी पाठ्यक्रम में नहीं है। इसीलिये उसे प्रकाशित करने के लिये प्रकाशक नहीं उद्यत है।

लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से लगभग दो दर्जन श्रेष्ठ ग्रन्थ रत्न प्रकाशित हो चुके हैं। इन में से कतिपय की सुन्दर आलोचनाएँ भी पत्र पत्रिकाओं में पढ़ने को मिलीं। परन्तु मलूकदास का भाग्य यहाँ भी न चमका। तात्पर्य है कि यहाँ की प्रकाशन समिति ने उसके अनन्तर स्वीकृत शोध-प्रबन्धों को सहर्ष प्रकाशित किया, परन्तु 'मलूकदास' की ओर अधिकारियों का ध्यान न गया, जीवन में जो एक बार पिछड़ जाता है वह सदैव के लिये पिछड़ जाता है। अस्तु 'मलूकदास' प्रकाशन क्रम से विलग होकर अन्धकार के आवरण में आज भी सन्निहित पड़ा है।

प्रश्न यह है कि हिन्दी शोध जगत में आंधी आने से लगभग सतरह वर्ष पूर्व लिखित, स्वीकृत तथा विद्वानों द्वारा समर्थित यह ग्रन्थ अप्रकाशित क्यों रह गया। वास्तव में यह बड़ी विडम्बना पूर्ण परिस्थिति है। मौन साधना करने वाला व्यक्ति, शिफारसों के सग्रह, तथा दलबन्दी में विश्वास नहीं करता है। तब उसके ग्रन्थ का कौन प्रकाशित कर दे। ऐसी स्थिति में मलूकदास का साहित्य अप्रकाशित पड़ा रहना स्वाभाविक है। परन्तु हिन्दी के अधिकारियों और विद्वानों को सचेत हो जाना चाहिये। आज सांस्कृतिक दृष्टिकोण से ग्रन्थों पर विचार करने की महती आवश्यकता है। हिन्दीसमिति तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन भी उस ओर ध्यान दे सके तो हिन्दी की आशातीत उन्नति होगी।

तो, मलूकदास सतरह वर्ष पूर्व विरचित, पी० एच० डी० शोध प्रबन्ध डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा डा० राम कुमार वर्मा जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति सम्प्राप्त विद्वानों द्वारा प्रशंसित होने के वावजूद न छप सका। इसको आदर्श ग्रन्थ मानकर लखनऊ विश्वविद्यालय में तीन-चार शोध प्रबन्धों की रचना इसी के आधार पर हुई। फिर भी यह ग्रन्थ न प्रकाशित हो सका। इसलिए अवसर का लाभ उठाकर मैं उन उदार व्यक्तियों को धन्यवाद देने का सौभाग्य इस कृति के द्वारा प्राप्त कर लेना ही चाहता हूँ जिन्होने 'मलूकदास' के लेखन काल में मुझे प्रेरणा, सहायता, सामग्री तथा प्रोत्साहन दिया। इनमें से प्रेमनारायण दीक्षित एम० ए०एल० एल० बी०, महन्त हनुमान प्रसाद, तथा बाबा श्याम सुन्दरदास की महती कृपा, प्रेम तथा स्नेह को मैं कैसे भूल पाऊंगा। दुख है कि इनमें से अब इस ससार में कोई नहीं है। 'मलूकदास' की रचना के पीछे इनकी प्रेरणा का विवरण विस्तृत है आज सहस्त्रों स्मृतियां साकार हो उठी हैं। छोटी सी भूमिका उन स्मृतियों के भार को संभाल नहीं पाएगी। महंत नानक चन्द जी के प्रयत्न से मलूक स्मारक समिति की स्थापना हुई। परपीड़कों का अभाव नहीं है परन्तु पर हित में अनुरक्त व्यक्ति संसार में बहुत कम हैं। उनका त्याग, परिश्रम तथा लगन की सराहना किन शब्दों में करूं। 'मलूकदास' की रचना मेरे जीवन के सबसे भीषण, संघर्ष प्रधान तथा विपत्तियों से अभिशप्त काल में हुई थी, इसीलिये वह मुझे और भी प्रिय है।

त्रिलोकी नारायण दीक्षित

विश्वविद्यालय
लखनऊ

दो शब्द

प्रस्तुत ग्रन्थ डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित द्वारा की गई मेरे प्रति कृपा का ही परिणाम है। आज से लगभग ४ वर्ष पूर्व मैंने उनसे अनुरोध किया था कि कृपया एक छोटी सी पुस्तिका प्रकाशनार्थ मुझे दें, जो संत मलूकदास स्मारक समिति की ओर से प्रकाशित की जा सके। मुझे हर्ष है कि मेरे निवेदन को स्वीकार करके उन्होंने शीघ्र ही संत मलूकदास जी पर लिखे गए शोध-प्रबन्ध का कुछ अंश प्रकाशनार्थ भेज दिया। सौभाग्यवश श्री सूरज नारायण जी मेहरोत्रा, रिटायर्ड एकाउन्टस आफिसर (संस्थापक विकास-प्रेस, कल्याणी देवी, प्रयाग) मेरे संपर्क में आए जिनके विशेष सहयोग से ग्रन्थ इस सुन्दर रूप में प्रकाशित हो पाया है। ग्रन्थ की भूमिका लिखकर पद्मभूषण डा० राम कुमार वर्मा, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय ने सदैव की भांति संत मलूकदास जी के प्रति अपनी सहज श्रद्धा का परिचय दिया है। श्री गणेश भारती, श्री भोलानाथ मालवीय, श्री प्रीति कुमार तथा चित्रकार श्री नन्दराम गौतम आदि सभी संत-प्रेमीजन धन्यवाद के पात्र हैं, जिन्होंने अपना सक्रिय सहयोग विविध रूप से प्रदान किया है। श्री हरिमोहन मालवीय ने इसके प्रकाशन में उल्लेखनीय सहयोग और परिश्रम किया है। संत मलूकदास का मूल चित्र श्री राम कृष्ण कक्कड़ और उनके पुत्र श्री लालजी कक्कड़ की कृपा से प्राप्त हुआ है जिसकी अनुकृति इस कृति के साथ प्रकाशित हो रही है। यह सहयोग संत मलूकदास जी के प्रति इन स्वजनों की सहज श्रद्धांजलि है।

आशा है कि संत मलूकदास जी पर सर्वप्रथम एक अधिकारी विद्वान के द्वारा लिखा गया यह ग्रन्थ अवश्य ही उनके जीवन और साहित्य की ओर जन समाज का ध्यान आकृष्ट करेगा।

अ० भा० संत मलूकदास स्मारक समिति कड़ा में उस संत का भव्य स्मारक निर्माण कराने के कार्य की दृष्टि से सक्रिय है। संत-सूफी-साहित्य संस्थान के माध्यम से इस प्रकार की सामग्री प्रकाशित करने का भी आयोजन है। प्रथम कृति इस रूप में संस्थान की ओर से प्रकाशित हो रही है, इसमे 'मलूक परिचयी' जैसी महत्वपूर्ण कृति को समाविष्ट करके अप्रकाशित संत-साहित्य की विशृंखलित लड़ी जोड़ी जा रही है। आशा है कि भविष्य में भी इसी प्रकार की दुर्लभ सामग्री जिज्ञासु संत-प्रेमियों के अध्ययनार्थ प्रकाशित करने में हम सफल हो सकेंगे। इस प्रकार के पुण्य कार्य में श्रद्धालु जन तन-मन-धन से समिति को पूर्ण सहयोग प्रदान करेंगे, ऐसा विश्वास है।

विनीत,

महंत नानक चंद

विषयानुक्रम

	पृष्ठ संख्या
१—(अ) भूमिका—डा० रामकुमार वर्मा ...	अ
(आ) निवेदन—डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित	आ
(इ) दो शब्द—महंत नानक चन्द ...	इ
२—मलूकदास का युग ...	१
४—मलूकदास का जीवन और व्यक्तित्व ...	६
५—मलूकदास की रचनाएं ...	१६
६—मलूकदासी सम्प्रदाय ...	२४
७—मलूकदास के राम ...	३३
परिशिष्ट—	
(अ) मलूक-परिचयी-सधुरादास—महंत नानकचंद	४५
(आ) चयनिका—डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित	६६

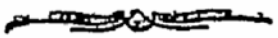

मलूकदास का युग

किसी देश के निवासी मनुष्यों पर उनके देश, समाज एवं समय का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। वातावरण के प्रभाव से दूर रहना मनुष्य के लिए कठिन है। किसी घटना के मूल में तत्कालीन परिस्थितियों का विशेष भाग होता है। मलूकदास की जीवन घटनाएं भी उनके समय की परिस्थितियों से प्रभावित थीं। मलूकदास का लक्ष्य था पथभ्रष्ट जनता को मार्ग पर लाना, अंधकार के गर्त की ओर अग्रसर मानव को प्रकाश प्रदर्शन करना, विश्वकल्याण के हेतु विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रसार करना तथा क्षमा, दया तथा त्याग आदि मानवोचित गुणों का जनता में व्यवहार बढ़ाना। उनके इस लक्ष्य के मूल में अनेक कारण निहित थे। इन कारणों से प्रेरित कार्यों को सम्यक रूप से समझने तथा उन पर विचार करने के हेतु मलूकदास के आविर्भाव तथा उत्कर्ष काल का धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का अध्ययन कर लेना आवश्यक प्रतीत होता है। कवि ने अपनी रचनाओं में तत्कालीन राजनीतिक अथवा सामाजिक दशाओं का चित्रण कहीं भी नहीं किया है। इसका कारण यह है कि उन्होंने अपने ग्रन्थों की रचना जनहिताय तथा स्वांतः सुखाय की थी। ऐतिहासिक घटनाओं को सुरक्षित रखने के हेतु नहीं की। तत्कालीन परिस्थितियों पर अन्तःसाक्ष्य प्रमाण के अभाव में बहिर्साक्ष्य प्रमाणों के आश्रित ही होना पड़ता है। मलूकदास के समय पर प्रकाश डालने वाले सूत्रों में सर्व प्रथम उल्लेखनीय हैं उनके समकालीन कुछ कवि और परवर्ती इतिहासकार।

सामान्य रूप से मलूकदास का जन्म संवत् १६३१ वि० तथा मृत्युकाल संवत् १७३९ वि० माना जाता है। उन्होंने १०८ वर्ष का पवित्र तथा निष्कलंक जीवन व्यतीत किया था। उनका आविर्भाव उस समय हुआ जब कि भारतवर्ष में अकबर के रूप में मुगल साम्राज्य का दीपक हिन्दुओं के स्निग्ध स्नेह से जगमगा रहा था। औरंगजेब के राज्यकाल के ३१वें वर्ष में उनका महाप्रस्थान काल है। उन्होंने अपने जीवनकाल में चार मुगल बादशाहों का राजत्वकाल देखा था अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ तथा औरंगजेब। हमारा कवि हिन्दी साहित्य मन्दिर में सरस्वती के कतिपय उपासकों में से एक था जिन्होंने अपने जीवन में अपनी आंखों से मुगल साम्राज्य का उत्थान और पतन देखा था।

सथुरादास ने अपने ग्रन्थ परिचयी में अकबर की धार्मिक नीति अथवा देश की दशा का संक्षेप में उल्लेख किया है। सथुरादास के कथन से दो बातें प्रकट होती हैं।

तीस बरस तक अकबर रहा।
तिन साधुन सों कछु न कहा॥

सर्वप्रथम ध्यान देने योग्य बात यह है कि तीस वर्ष के राज्यकाल में अकबर ने हिन्दू जनता के धार्मिक जीवन में किंचित मात्र भी हस्तक्षेप नहीं किया और इस नीति के फलस्वरूप देश में शांति और धार्मिक स्वातन्त्र्य रहा। सथुरादास के इस कथन का समर्थन इतिहास से भी होता है। अकबर अपनी धार्मिक नीति में अपनी हिन्दू रानियों से बहुत प्रभावित था। उनके अंतःपुर में हिन्दू रानियां मूर्तिपूजा, व्रत तथा दान आदि स्वतंत्रता पूर्वक करती थीं। इसका जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उसके उपासना गृह में प्रत्येक धर्म पर स्वतंत्रतापूर्वक मत प्रकट किए जाते थे। अपने पूर्वजों द्वारा जजिया, तीर्थयात्रा कर तथा देवालयों के निर्माण के विरुद्ध लगे हुए प्रतिबंधों को अकबर ने हटा लिया था। अकबर की सारग्राहिता तथा उदारता का एक और उल्लेखनीय उदाहरण है। उसने हिन्दुओं के धार्मिक ग्रन्थ अथर्ववेद, महाभारत तथा रामायण आदि ग्रन्थों का अनुवाद करवाया। अकबर ने अपने राज्य में शुद्धि की आज्ञा दे दी थी। उसने सन् १५६२ ई० में युद्ध बन्दियों को मुसलमान बनाने की पूर्व प्रचलित प्रथा को समाप्त कर दिया। गोवध का निषेध कर दिया। उसने हिन्दुओं को उच्च पदों पर नियुक्त किया और अंतःपुर तथा राजप्रासाद के बाहर सभी हिन्दू त्यौहारों को स्वतंत्रतापूर्वक मनाने की आज्ञा दी। उसका हृदय उदार एवं विशाल था और वह भारतीय कला-कौशल का प्रशंसक तथा समर्थक था। वह हिन्दू संस्कृति तथा हिन्दी भाषा का प्रेमी था। बीरबल, गंग तथा इसी कोटि के अन्य हिन्दी के नीतिकार कवि उसके राजदरबार में सम्मानित स्थान पर नियुक्त थे। अकबर ने अपने ही राज्यकाल में सर्वप्रथम हिन्दी-फारसी कोष पारसीक प्रकाश की रचना करवाई थी। अकबर के राज्यकाल में मलूकदास ने अपने जीवन के ३० वर्ष व्यतीत किए थे। यह देश की समृद्धि, विकास, धार्मिक स्वतंत्रता एवं हिन्दू-मुसलमानों की एकता का युग था। राज्य की ओर से इस धार्मिक उदारता की छाप मलूकदास के साहित्य में भी दृष्टिगत होती है।

अकबर की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र जहांगीर राज्य-सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। इस समय तक भारतीय जनता के हृदय पर अकबर की उदारता के चिह्न अंकित थे। सथुरादास ने परिचयी में जहांगीर की धार्मिक नीति के विषय में निम्नलिखित शब्दों में अपने विचार प्रकट किए हैं—

तिनके पीछे भा जहंगीरा।
करता अदल हरै सब पीरा॥

वर्तमान इतिहासकार सथुरादास के उपर्युक्त कथन से सहमत हैं। जहांगीर ने राज्य के साथ ही साथ अपने पिता की धार्मिक नीति को भी ग्रहण किया था। परन्तु वह मुसलमानों के प्रति कुछ पक्षपात करता था। वह हिन्दुत्व की अपेक्षा इस्लाम में अधिक रुचि रखता था। धर्म के ग्रहण और परित्याग के विषय में वह अकबर की भांति उदार न था। इस्लाम को अंगीकार करने वालों को राज्य-कोष से आर्थिक वृत्तियां दी जाती थीं। उन लोगों का विशेष सम्मान होता था। इन उपर्युक्त अपवादों के अतिरिक्त जहांगीर अन्य विषयों पर उदार ही बना रहा। युद्ध के अवसरों पर उसने कई बार हिन्दुओं के मन्दिर भी नष्ट करवा दिए थे। यद्यपि वह हिन्दू यात्रियों के प्रति उदार था। उसके राज्यकाल में हिन्दू-त्योहार और मेले पूर्ववर ही मनाये जाते थे। सारांश यह कि जहांगीर ने अकबर की नीति का अनुगमन करने का प्रयत्न किया, फिर भी उसकी नीति अपने पिता की अपेक्षा कुछ संकुचित थी।

सन् १६२७ में जहांगीर की मृत्यु हुई। इस समय के अन्तर्गत हमारा कवि मलूकदास दो मुगल राजाओं की धार्मिक नीति देख चुका था। उसने अपनी बाल्यावस्था शौर्य तथा युवावस्था देश के शान्तिमय वातावरण में व्यतीत की थी। उसके जीवन का प्रायः आधा समय हिन्दुओं की उन्नति तथा विकास अवधि में व्यतीत हुआ था। जहांगीर की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र शाहजहां सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। सथुरादास ने अपने ग्रन्थ परिचयी में शाहजहां के विषय में लिखा है—

शाहजहां तिनके सुत राजा।
तिन फिर बहुत गरीब नेवाजा॥

सथुरादास के उपर्युक्त कथन से यह प्रकट होता है कि जहांगीर का पुत्र शाहजहां गरीबों पर दया करने वाला था। परन्तु इन पंक्तियों में प्रयुक्त शब्द 'फिर' जहांगीर तथा शाहजहां की प्रवृत्ति में भेद प्रकट कर देता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि वह जहांगीर की भांति उदार नहीं था, फिर भी वह गरीबों पर दयालु था। इस 'फिर' से शाहजहां के पश्चात औरंगजेब की दुर्धर्ष नीति का भी आभास मिल जाता है।

यदि अकबर धार्मिक नीति में उदार था और जहांगीर धार्मिक विषयों की ओर विमुख तो शाहजहां कट्टर तथा धार्मिकता के रंग में अनुरंजित मुसलमान। यद्यपि शाहजहां एक राजपूत नारी का पुत्र था जिसके पति को माता स्वयं राजपूत स्त्री थी तथापि उसमें मातृपक्ष के इन स्वाभाविक गुणों का लेशमात्र भी प्रभाव नहीं दृष्टिगत होता है।

सन् १६३५ ई० में शाहजहां ने अपने को इस्लाम के विरोधियों का विनाशकारी उद्घोषित किया। उसने राज्य के उच्चपद केवल मुसलमानों के लिए ही सुरक्षित रक्खे और हिन्दू तीर्थ यात्रियों पर कर लगा दिया। सन् १६३२ ई० में उसने प्राचीन

मंदिरों का जीर्णोद्धार और नवीन मंदिरों का बनना रोकवा दिया। उसकी यह नीति देखकर मुसलमान कर्मचारियों ने भी हिन्दुओं को उत्पीड़ित करना आरम्भ कर दिया था। उसने जुझार सिंह तथा उसके परिवार को मुसलमान बना लिया तथा हिन्दुओं के सामाजिक जीवन में नाना प्रकार के संकट उत्पन्न कर दिए।

संक्षेप में शाहजहां अपने पूर्वजों की अपेक्षा इस्लाम का अधिक पक्षपाती था, परन्तु उसका उत्पीड़न व्यापक नहीं रहा। इसी कारण सथुरादास ने उसकी नीति के विषय में कोई सविस्तार उल्लेख नहीं किया है। सथुरादास के कथन 'तिन फिर बहुत गरीब नेवाजा' से शाहजहां की न्यायप्रियता का भी बहुत कुछ आभास मिलता है।

शाहजहां की मृत्यु के समय अर्थात् सन् १६५८ ई० में मलूकदास की अवस्था ८४ वर्ष की थी। उसकी मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र औरंगजेब सम्राट हुआ। सथुरादास के मतानुसार औरंगजेब के राजगद्दी पर बैठते ही देश में सर्वत्र हिन्दुओं का उत्पीड़न आरम्भ हो गया। सम्राट होने पर उसने विचारपूर्वक अपना एक धार्मिक नीति बनाई। यह नीति शाहजहां जहांगीर और अकबर से पूर्णतया भिन्न थी। औरङ्गजेब इस्लाम का बहुत विकट अनुयायी था। वह कुरान के कथित विषयों के अनुसार आचरण करता था। इसी कारण उसने राज्यारोहण के पश्चात राज्य में प्रचलित हिन्दू प्रथाओं और राज्यपदों के लिए हिन्दुओं की नियुक्ति बन्द कर दी थी। सन् १७०२ ई० में उसने फौज से भी हिन्दुओं को हटा दिया। औरङ्गजेब अपने को इस्लाम धर्म का कट्टर अनूयायी और प्रचारक मानता था। इस धर्म में धार्मिक सहिष्णुता महान पाप समझी जाती थी। इस्लाम के अनुयायियों के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों कों इस देश में रहने की आज्ञा नहीं थी, परन्तु कठिनाई यह थी कि हिन्दू जानि भारतवर्ष से समूल उखाड़ी नहीं जा सकती थी। अतः हिन्दू खिराज गुजर की हैसियत से देश में रहते थे। मुहम्मद साहब की आज्ञानुसार औरङ्गजेब ने सन् १६७९ ई० में हिन्दुओं पर जजिया लगाया। जजिया कर लगाये जाने का स्थान-स्थान पर विरोध किया गया और सारे देश में उसके हटाये जाने का अनुरोध किया गया पर कोई भी प्रयत्न फलीभूत न हुआ। जजिया से राज्य की आय बढ़ गई। दूसरा फल यह हुआ कि अनेक हिन्दू मुसलमान हो गए। औरङ्गजेब का समकालीन मनूसी लिखता है कि कर देने में असमर्थ अनेक हिन्दू कर वसूल करने वालों के अपमान से बचने के लिए मुसलमान हो गए। औरङ्गजेब प्रसन्न होता था कि इस वसूलयाबी से हिन्दू मुसलमान हो जाने के लिए विवश हो जायेंगे। औरङ्गजेब में मंदिरों को नष्ट करने की प्रवृति बहुत पहले से ही थी। गुजरात के गवर्नर के पद से उसने अनेक भव्य मंदिरों को नष्ट करवा दिया था। सम्राट होने पर फरवरी २८, सन् १६५९ ई० में उसने नबीन मंदिरों के निर्माण को रोकने के लिये एक आज्ञापत्र

मलूकदास का जीवन और व्यक्तित्व

मलूकदास के जीवनचरित्र पर हिन्दी साहित्य के कुछ पाश्चात्य तथा भारतीय इतिहासकार विद्वानों ने प्रकाश डाला है। जिनमें विशेष उल्लेखनीय हैं सर जार्ज ग्रियर्सन, एच. एच. विल्सन, जेम्स हैस्टिंग्ज, एच. आर. नेविल, शिवसिंह सेंगर, रा. ब. डाक्टर हीरालाल, मिश्रबन्धु, रामचन्द्र शुक्ल, डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, डा० श्यामसुन्दर दास डा० रामकुमार वर्मा तथा परशुराम चतुर्वेदी। परन्तु इन उपर्युक्त लेखकों में मलूकदास की जीवनी पर बड़ा मतभेद है। सथुरादास लिखित मलूकदास का जीवन चरित्र सबसे अधिक प्राचीन तथा प्रामाणिक है। सथुरादास लिखित परिचयी कवि के जीवन चरित्र पर गम्भीर प्रकाश डालती है तथा उपर्युक्त लेखकों के विभिन्न मतान्तर्गत भेदों का समाधान भी भली भांति करती है।

मलूकदास का जन्मस्थान

मलूकदास प्रयाग से प्रायः ३६ मील उत्तर तथा पश्चिम में गंगा के दाहिने किनारे पर बसे हुए, कड़ा[1] नगर में उत्पन्न हुये थे। कड़ा उत्तरी-पूर्वी भारत के उन कतिपय स्थानों में से है जो प्राचीनकाल से अपनी स्थिति के कारण विशेष राजनैतिक महत्व के समझे जाते थे।

जन्मकाल

सथुरादास लिखित परिचयी के अनुसार मलूकदास का जन्म वैशाख कृष्ण पंचमी संवत् १६३१ वि० को हुआ था।[2] मलूकदास की जन्मतिथि के विषय में शिवसिंह सेंगर, मिश्रबन्धु तथा रा० ब० डा० हीरालाल के अतिरिक्त अन्य सभी पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों के मत परिचयी के मत से साम्य रखते हैं।

परिचयी लेखक सथुरादास से मलूकदास के जन्म संवत् पर मतसाम्य रखने वालों में सर्वप्रथम एच. एच. विल्सन का मत उल्लेखनीय है। विल्सन ने मलूकदास के जन्म

---

१. कड़े मांहि खत्री के गेहा। प्रकट भये भक्त धरि देहा॥

२. वैसाख बदी तिथि पंचमी संवत सोरह सौ इकतीस।
जगत गुरू प्रकट भये मलूक पुरुष जगदीस॥
परिचयी, पृ० १

तथा मृत्यु काल के विषय में कोई विशेष तिथि का उल्लेख नहीं किया है, वरन् उन्हें नाभादास का समकालीन माना है तथा अकबर के राज्यकाल के अन्तिम वर्षों में जन्म होने का अनुमान लगाया है। विल्सन का यह अनुमान परिचयी में लिखित तिथि से बहुत कुछ साम्य रखता है। मलूकदास का जन्म सन् १५७४ ई० अथवा संवत् १६३१ वि० में हुआ था और अकबर का राज्यकाल सन् १५५५ से १६०५ तक रहा है। इस प्रकार विल्सन के मतानुसार मलूकदास का अकबर के राज्य काल में जन्म लेना तथा नाभादास का समकालीन होना असंगत नहीं प्रतीत होता। विल्सन ने औरङ्गजेब के समय में मलूकदास की मृत्यु तिथि का अनुमान किया है जो परिचयी से मिलता है। औरङ्गजेब का राज्य काल १६५८ से १७०७ ई० तक रहा है, और मलूकदास का देहावसान सन् १६८२ ई० अथवा संवत् १७३९ वि० में हुआ था।[1]

डब्ल्यू० क्रुक्स ने अपने ग्रन्थ ट्राइब्स एड कास्ट्स में मलूकदासी पंथ का उल्लेख किया है।[2] प्रस्तुत सम्प्रदास के विषय में, क्रुक्स महोदय ने एच. एच. विल्सन का मत पूर्णतया स्वीकार कर लिया है। इस विषय में उन्होंने किसी नवीन बात अथवा विशेष सूचना का उल्लेख नहीं किया है। विल्सन के मत को स्वीकार करके, पुस्तक में स्थान देने का यही अभिप्राय लगाया जा सकता है कि क्रुक्स महोदय भी विल्सन के मत से सहमत हैं।

सर-जार्ज ग्रियर्सन ने मलूकदास की जन्मतिथि का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं किया है। परन्तु उनके कथन से कि सम्राट औरङ्गजेब के राज्यकाल में १७ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मलूकदास नामक एक तिजारती थे...।[3]

---

1. We might therefore place Maluk Das–where there is reason to place Nabha Ji, about the end of Akbar's reign as far as this Geneology is to be depended upon, but there is reason to question even its accuracy and to bring down Maluk Das to a comparatively recent period, the uniform belief of his followers is indeed sufficient testimony of his head, and they are invariably agreed in making him contemporary with Aurangzeb.

   Essays and Lectures chiefly on the Religion of Hindus by H. H. Wilson, collected and edited by Dr. Reinhold Rost, Vol. I, p. 100

2. Tribes and castes by W. Crookes, B. A., Vol. III, p. 472

3. Maluk Das was a trader by occupation who lived in the reign of Emperor Aurangzeb (latter half of 17th century A. D.)

   Encyclopedia of Religion & Ethics, Ed. by James Hastings, Vol. VIII, p. 374

मलूकदास का स्वर्गवास सन् १६८२ ई० (संवत १७३९) में हुआ था जो १७वीं शताब्दी का अन्तिम काल निर्धारित होता है। इस गणना से भी परिचयी में लिखित मलूकदास का जन्म संवत ठीक जँचता है।

डिस्ट्रिक्ट गजेटियर इलाहाबाद के सम्पादक तथा लेखक एच. आर. नेविल आई. सी. एस. ने केवल मलूकदास की मृत्यु तिथि का उल्लेख किया है। जो परिचयी में लिखित संवत् से साम्य रखता है।[1] इस मृत्यु तिथि में उनके जीवन काल के १०८ वर्ष जोड़ देने से मलूकदास की वही जन्मतिथि आ जाती है जो परिचयी में लिखा हैं।

पिता

मलूकदास के पिता का नाम भी विवादग्रस्त विषय है। इस विषय पर परिचयी के लेखक सथुरादास से कुछ लेखकों का मतवैषम्य है।[2]

कृष्ण बल्देव वर्मा के अनुसार मलूकदास के पिता का नाम बाबा श्याम सुन्दर दास था।[3] गणेश प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार कवि के पिता का नाम लाला सुन्दर लाल था।[4] परन्तु परिचयी लेखक सथुरादास के अनुसार उनके पिता का नाम सुन्दर दास था, जैसा कि निम्नलिखित उद्धरण से प्रकट होता है।

सुन्दरदास पिता को नामा।
कालहि पाय गये हरि धामा।[5]

मलूकदास के पिता का नाम सुन्दरदास था। जिस प्रकार मलूकदास की जन्म तथा मृत्यु तिथियों के विषय में लेखकों में मतभेद हैं उसी प्रकार उनकी जाति के विषय में भी विद्वानों में बड़ा मतभेद है। शिवसिंह सेंगर तथा मिश्रबन्धुओं का मत है कि कड़ा निवासी मलूकदास ब्राह्मण थे। अन्य लेखकों का मत है कि वे खत्री दम्पति के पुत्र थे।

---

1. In the middle of the town is the house of celebrated Maluk Das, otherwise known as Chandra Maluk Shahi, as ascetic who died in 1682.
   District Gazettier of United Provinces, Allahabad, Vol XXIII p. 250
२. परिचयी से मतवैषम्य रखने वालों में कृष्ण बल्देव वर्मा तथा गणेश द्विवेदी विशेष उल्लेखनीय हैं।
३. हिन्दी बसन्त, सम्पादक मुरारि शरण मांगलिक, पृ० ७२
४. हिन्दी के कवि और काव्य, गणेश प्रसाद द्विवेदी, भाग प्रथम
५. परिचयी, पृ० ३

मिश्रबन्धुओं ने 'विनोद' में मलूकदास के विषय में जो कुछ लिखा है उस सबका आधार शिवसिंह सेंगर कृत सरोज ही प्रतीत होता है। मिश्रबन्धुओं के मलूकदास विषयक उल्लेख से भी यही प्रकट होता है।[1] मलूकदास की जन्म तथा मृत्यु तिथि को निर्धारित करते समय सेंगर जी की भ्रान्तियों का उल्लेख हो चुका है। फलतः आधार के अप्रामाणिक तथा अशुद्ध सिद्ध हो जाने पर मिश्रबन्धुओं का मत भी निराधार हो जाता है। मलूकदास खत्री दम्पत्ति की सन्तान थे। मलूकदास की जीवनी पर सबसे अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ परिचयी से भी इस बात का समर्थन होता है। सथुरादास ने निम्नलिखित शब्दों में मलूकदास की जाति वर्ण का उल्लेख किया है।

कड़े मांहि खत्री के गेहा।
प्रकट भये भक्त धर देहा ॥[2]

हिन्दी के अन्य लेखक तथा इतिहासकारों का मत परिचयी लेखक के मत से समता रखता है।[3]

संसार से विरक्ति का जो वृक्ष मलूकदास के हृदय में आगे चलकर पल्लवित तथा पुष्पित हुआ, उसका बीजारोपण उनकी बाल्यावस्था में ही हो चुका था। उदारता, दया, धर्म आदि जो दैवी गुण उनमें बाद को प्रमाणित हुए उनका प्रारम्भ उनका शैशवावस्था में ही हो चुका था। जीवन की अत्यन्त कोमल अवस्था से ही मलूकदास के मन में दया, धर्म की अधिकता थी और वह भगवत भजन में अधिक मन लगाते थे।[4] बालक मलूकदास की अवस्था के साथ ही उसमें भक्ति बढ़ती गई।[5] उनके हृदय

---

१. मलूकदास ब्राह्मण कड़ा मानिकपुर के निवासी थे। इनका समय सरोज में १६८५ है परन्तु कोई ग्रन्थ हमारे देखने में नहीं आया।
मिश्रबन्धु, विनोद पृ० ४०३.४०४

२. परिचयी, पृ० १

३. क. इनके पिता का नाम सुन्दरदास खत्री था।
हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० २६६
ख. मलूकदास जी एक खत्री बालक थे।
हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास। पृ० ३२८
ग. मलूकदास का जन्म...खत्री...के घर में हुआ था।
हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, पृ० ३११

४. दया धरम मन में अधिकाई। राम भजन सुमरिन चित लाई।

५. ज्यों ज्यों बालक होई सयाना। त्यों त्यों लक्षण भक्ति निधाना।

में दया का इतना अधिक संचार था कि द्रवीभूत होकर दीन दुखियों को देने के लिए वे अपने घर में चोरी तक करते थे।[1] घर में अन्न वस्त्र जो कुछ भी सुविधापूर्वक मिल जाता था, उसे वे नंगे भूखों में वितरित कर देते थे।[2]

मलूकदास की यह दान प्रवृत्ति देखकर उनके माता-पिता अत्यन्त चिन्तित होते थे। वे मन में सोचते कि कुल को नष्ट करने वाले इस बालक का जन्म ही क्यों हुआ?[3] फलतः मलूकदास की दानप्रवृत्ति को रोकने तथा उनके विरक्त मन को पुनः सांसारिकता में लगाने के लिए माता पिता दोनों ने मिलकर यह मत निर्धारित किया कि अब बालक को किसी कार्य में लगाना चाहिये।[4] घर में कम्बल बेचने का व्यापार होता था, अतः व्यापार के कार्य में नियोजित करने के हेतु सुन्दरदास, मलूकदास को कम्बल बेचने के लिये देने लगे।[5] अब उनको दान देने के

घ....ये जाति के खत्री थे उपाधि थी कक्कड़
सन्त साहित्य, पृ० ७३

ङ. जन्म...खत्री के घर में हुआ था।
कल्याण का योगांक श्रावण १९९२, पृ० ८०४

च. बाबा मलूकदास...खत्री कक्कड़ घर में प्रकट हुए थे।
मलूकदास की वानी, वेलवेडियर प्रेस, पृ० १

छ....जाति और आश्रम...खत्री...कक्कड़
सन्त वानी संग्रह, भाग १, तीसरा संस्करण

ज. बाबा मलूकदास का जन्म खत्री के यहां...हुआ था।
हिन्दी के कवि और काव्य भाग १

झ. हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय
नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १५, पृ० ७९

ञ. उत्तर भारत की संत परम्परा, परशुराम चतुर्वेदी, पृ० ५०५

य. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० १०२

१. दुखित जोव पर करुना करई। तिनहिं हित चोरी घर करहीं।

२. अन्न वस्त्र जो घर में आवे। नंगे भूखे आन खवावे।

३. माता पिता कहें यह बालक। उपजेउ आय कहां घर घालक।

४. दोनों मिलि ये मत ठहराई। अब याको कछु राह लगाई।

५. वनिज कामरी को घर होई। कछुक देई वेचन को सोई।

लिये और भी सुन्दर अवसर प्राप्त होने लगे। वे कुछ कम्बल बेचते और कुछ नगों में वितरित कर देते थे।[1]

परिचयी में इसके अतिरिक्त मलूकदास की बाल्यावस्था का और कोई विशेष विवरण नहीं प्राप्त होता।

मलूकदास की बाल्यावस्था सम्बन्धी कुछ जनश्रुति भी प्रचलित हैं। कहा जाता है कि शैशवावस्था में मलूकदास दिन निकलते घर से निकल जाते थे, और मार्ग में पड़े हुए ईंट पत्थरों को हटाया करते थे। जिस समय उनके अन्य समवयस्क बालक खेल कूद में लगे रहते थे, उस समय वे मार्ग के कंकड़ पत्थर हटाते फिरते थे। एक दिन एक साधु ने उनको इस कार्य में व्यस्त देखा। पास-पड़ोस के सभी लोगों से पता लगा कर साधू मलूकदास के पिता के पास जा पहुँचा और भविष्य में बालक के महापुरुष होने की भविष्यवाणी की।

परिचयी तथा जनश्रुति से उपलब्ध मलूकदास की बाल्यावस्था के विषय में जो कुछ हमें ज्ञात होता है, वह उनकी आन्तरिक प्रवृत्ति के विषय में है। मलूकदास की रुचि, कार्यकलाप तथा आमोद-प्रमोदों के विषय में न तो परिचयी में कुछ उपलब्ध होता है, और न जनश्रुति ही इस विषय पर प्रकाश डालती है।

मलूकदास की शिक्षा तथा अध्ययन के विषय में अन्तर्साक्ष्य का कोई भी प्रमाण नहीं मिलता। उनके जीवनचरित्र पर सबसे अधिक प्रकाश डालने वाला साधन परिचयी भी कवि के इस पक्ष पर प्रकाश नहीं डालती। किंवदंती है कि पांच वर्ष की अवस्था प्राप्त होने पर सुन्दरदास ने अपने पुत्र मलूकदास को ग्राम-पाठशाला भेजा। विद्यालय के नियमानुसार प्रवेश हो जाने पर, गुरु ने पाटी पर वर्णमाला लिख कर अभ्यास करने का आदेश दिया। बालक मलूकदास ने वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर पर साखिया लिख डालीं। गुरु को बालक की इस ईश्वर प्रदत्त शक्ति को देखकर आश्चर्य हुआ। मलूकदास के इस अध्ययन सम्बन्धी घटना का उल्लेख परिचयी में नहीं है। किंवदंती द्वारा प्रचलित इस घटना में श्रद्धा का भाव अधिक प्रतीत होता हैं। इस घटना का मस्तिष्क से उतना अधिक सम्बन्ध नहीं है जितना कि हृदय से। ऐसा प्रतीत होता है कि मलूकदास के बारहखड़ी ग्रन्थ के आधार पर उनके भक्तों ने यह कथा गढ़ डाली है।

मलूकदास की रचनाओं में प्रयुक्त संस्कृत तथा फारसी के शब्दों को पढ़ कर पाठक को उनके बहुपठित होने का सन्देह होने लगा है। परन्तु तथ्य इससे भिन्न है। भाषा अथवा शब्दों का जो कुछ भी ज्ञान कवि को था वह केवल वातावरण का फल था।

---

१. कछु बेंचे कछु नागन दीन्हा। संत संग मिलि भक्तन कीन्हा।

कड़ा में चिरव्याप्त हिन्दु-संस्कृति तथा यवनों की नवप्रचलित इस्लाम-संस्कृति के फलस्वरूप मलूकदास की भाषा में दोनों प्रकार के शब्दों का मिलना कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

मलूकदास के गुरू के विषय में हिन्दी के विद्वानों के मत एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं। क्षितिमोहन सेन[1], अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध'[२], तथा सन्त बानी संग्रह के सम्पादक[3] का मत है कि उनके गुरु द्राविड़ देश के महात्मा विट्ठलदास थे। इस मत से भिन्न मत' भारत वर्ष का धार्मिक इतिहास' के लेखक शिवशंकर मिश्र का मत है कि कोई कोई उन्हें कील का शिष्य बतलाते हैं।[४] तीसरा मत हैं डा० पीतम्बरदत्त बड़थ्वाल[५] तथा भुवनेश्वर प्रसाद माधव का।[६] डा० बड़थ्वाल के अनुसार नाम मात्र के लिए इन्हीं ने देवनाथ जी से शिक्षा ली थी। किन्तु आध्यात्मिक जीवन में उनकों वस्तुतः दीक्षित करने वाले गुरु मुरार स्वामी थे! सन्तबानी संग्रह में उनके गुरु का नाम गलती से विट्ठल द्राविड़ लिखा हुआ है। विट्ठल द्राविड़ तो उनके नाम मात्र के दीक्षा गुरु देवनाथ के गुरु भाऊनाथ के गुरु थे।[७]

सथुरादास कृत परिचयी देखने से डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल तथा भुवनेश्वर प्रसाद माधव के मत अशुद्ध सिद्ध होते हैं। मलूकदास ने सर्वप्रथम देवनाथ के पुत्र पुरुषोत्तम से दीक्षा ली थी, विट्ठल द्राविड़ से नहीं। विट्ठल द्राविड़ तो गुरु परम्परा में थे, दीक्षा देने वाले गुरु नहीं जैसा कि परिचयी की निम्नलिखित पंक्तियों से प्रकट होता है।

कछु दिन गये उठी मन माहीं। सुरति मर्याद हमरी गुरु नाहीं।
आपहि आप कियो उपचारा। चुला गुरू आप कर तारा।

---

1. Some say that he became afterwards a disciple of Vitthal Das from Daravir Country (Southern India).
Medaevial Mysticism by K. M. Sen, page 152

२. हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, द्वितीय संस्करण, पृ० ३२८

३. सन्त बानी संग्रह भाग १, पृ० ९९ तथा मलूकदास जी की बानी, पृ० ८

४. भारतवर्ष का धार्मिक इतिहास, पृ० ३२५

5. Maluk Das himself took initiations from Murar Swami and not from Vitthal Daravir–as the Editory of Sant Bani has it.
Nirgun School of Hindi Poetry, Page 262.

६. संत साहित्य, पृ०

७. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १५, पृ० ८०

दक्षिण देश द्राविड़ गाऊं। श्री वल्लभ प्रगटे तेहि ठाऊं।
ताकों हरि जी आज्ञा दीन्हीं। गोकुल आय थापना कीन्हीं।
ताते विट्ठल नाथ महन्ता। जिनको साख प्रकट भगवन्ता।
तिनके भाऊनाथ अधिकारी। देवनाथ तिनके सुखकारी।
तिनके परसोत्तम सब जाने।... ... ...।[1]
तब मलूक अपने घर लै आये। दीच्छा ले उत्साह कराये।

मलूकदास के गुरु के सम्बन्ध में एक अन्तर्साक्ष्य प्रमाण भी उपलब्ध है। 'सुखसागर' में कवि ने अपने दीक्षा गुरु के विषय में इस प्रकार उल्लेख किया है।

दच्छिन से प्रकटी भगति द्रावराड के देस।
... ...
गोकुल गांउ विदित भये प्रगटे विट्ठलनाथ।
भावनाथ तिनते भये देवनाथ सुत तास।
तिन ते परसोत्तम तेहि सिष मलूकादास।[2]

इस उद्धरण की अन्तिम पंक्ति विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है 'तेन ते परसोतम तेहि सिष मलूका दास' का यही अर्थ है कि देवनाथ से पुरुषोत्तम उत्पन्न हुये जिनके शिष्य मलूकदास हैं। अतः मलूकदास के नाममात्र के दीक्षा गुरु पुरुषोत्तम देवनाथ के पुत्र थे। देवनाथ उनके गुरु नहीं थे, जैसा कि डा० बड़थ्वाल तथा माधव ने लिखा है।

ऊपर कहा जा चुका है कि देवनाथ के पुत्र पुरुषोत्तम, मलूकदास के नाममात्र के दीक्षा गुरु थे, उनको वास्तव में दीक्षा देने वाले तथा एक विशेष भक्ति पद्धति में बांध देने वाले मुरार स्वामी थे। मुरार स्वामी के लिये मलूकदास ने विशेष श्रद्धा तथा प्रेम प्रदर्शित किया है। सुखसागर के उपर्युक्त उद्धरण के तारतम्य में कवि ने मुरार स्वामी के विषय में निम्नलिखित पंक्ति लिखी है—

सतगुरु मिले मुरारि जी प्रगट छाप विश्वास।[3]

परिचयीकार ने भी मलूकदास के विवाहित जीवन, पत्नी के नाम, स्वभाव तथा श्वसुर आदि पर प्रकाश नहीं डाला और मलूकदासी सम्प्रदाय के वर्तमान महन्त तथा अन्य शिष्यों को इसका कोई ज्ञान नहीं है। जनश्रुति भी इस विषय पर मौन है।

परिचयी में मलूकदास के विवाह के समय का कोई भी उल्लेख नहीं है। परन्तु विवाह के समय उनकी अवस्था का अनुमान हमें परिचयी के वर्णन क्रम से लगता है।

---

१. परिचयी, पृ० ३
२. सुखसागर, पृ० १६२
३. सुखसागर, पृ० १६२

परिचयी लेखक ने मलूकदास के विवाह का उल्लेख निम्नलिखित पंक्तियों के बाद किया है—

बारह बरस ऐसे ही बीते । आतम चीन्हे आपा जीते ।
रात दिवस मन सुमिरन करहीं । सन्त टहल हृदय में धरहीं ।[1]

इससे बाद परिचयी की १५ पंक्तियों में मलूकदास की विरक्ति परब्रह्म में अनुरक्ति तथा सन्तों की सेवा का वर्णन के अनन्तर मलूकदास के विवाह का उल्लेख हुआ है । इसके यह निश्चय हो जाता है कि उनका विवाह १२ वर्ष की अवस्था के बाद हुआ ।

सुन्दरदास ने अपने पुत्र मलूकदास का विवाह कुल में प्रचलित रीति तथा परम्पराओं के अनुसार किया ।[2] उनकी निर्लिप्त आत्मा का सम्बन्ध माया से जोड़ दिया गया । विवाह के पश्चात वधू घर में आई परन्तु भक्ति से ओतप्रोत मलूकदास का हृदय पत्नी में अनुरक्त न हुआ ।[3]

विवाह के कुछ समय बाद मलूकदास की पत्नी ने एक कन्या का गर्भ धारण किया, परन्तु पुत्री उत्पन्न होते ही माता तथा कन्या दोनों का स्वर्गवास हो गया ।[4]

विवाह के कितने समय बाद मलूकदास को पत्नी का स्वर्गवास हो गया यह ठीक प्रकार से नहीं कहा जा सकता है । परिचयो में इसका कुछ भो उल्लेख नहीं मिलता है, परन्तु परिचयी की निम्नलिखित पंक्तियों से अनुमान के लिए कुछ अवसर प्राप्त हो जाता है—

बीते काल पुत्री एक भई । पुत्री सहित सोऊ मरि गई ।[5]

मलूकदास के पिता का नाम सुन्दरदास, पितामह का जठरमल तथा प्रपितामह का वेणीराम था ।[6] उनकी माता तथा पत्नी के नाम जानने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं है । उनके तीन छोटे भाई थे जिनके नाम क्रमशः हरिश्चन्द्र, शृंगारचन्द्र तथा रामचन्द्र थे ।

---

१. परिचयी पृ० २

२. तापहि कियो विवाह विचारी । कीन्ही रीति कुलहिं व्यवहारी ।

३. व्याह बहू आनो घर मांही । तासों भक्त नेह न कराहो ।
परिचयी, पृ० २

४. बीते काल पुत्री एक भई । पुत्री सहित सोऊ मरि गई ।
परिचयी, पृ० २

५. परिचयी, पृ० २

६. यह सूचना वर्तमान महन्त से मिली है ।

सुन्दरदास की मृत्यु के पश्चात गृहस्थी का समस्त भार मलूकदास के कन्धों पर आ पड़ा। पिता की अन्त्येष्टि क्रिया से निवृत्त हो जाने पर मलूकदास को सब लोगों ने 'उद्धिम करि पालिये कुटुम्बा' का उपदेश दिया। यही उपदेश उनके हृदय में घर कर गया।

गृहस्थी अथवा परिवार में रहते हुए तथा उसके कर्तव्यों का निर्वाह करते हुये मलूकदास उसकी माया तथा दूषित प्रभावों से दूर रहे। आश्रम को त्याग कर साधना करने वाले साधकों के लिये उनका चरित्र आदर्श स्वरूप है।

परिचयी से ज्ञात होता है कि मलूकदास के कुटुम्ब का पैतृक व्यवसाय कम्बल बेचना था।[1] सुन्दरदास ने अपने पुत्र मलूकदास के विरक्त मन को सांसारिकता में लगाने के लिए अपने इसी पैतृक व्यवसाय में नियोजित किया।[2] परन्तु उनकी निर्लिप्त आत्मा को व्यापार का लाभ-हानि की लेखा प्रभावित न कर सका।

मलूकदास के पर्यटन तथा भ्रमण पर कोई अन्तर्साक्ष्य प्रमाण नहीं उपलब्ध होता है। वहिर्साक्ष्य प्रमाणों में से परिचयी द्वारा इस विषय पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। यद्यपि उनके जीवन का अधिकांश समय कड़ा में ही व्यतीत हुआ था, तथापि इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने यातायात की कठिनाइयों के उन दिनों में कड़ा से जगन्नाथ जी, पुरुषोत्तम क्षेत्र, कालपी तथा दिल्ली जैसे सुदूर स्थानों की समय-समय पर यात्रा की थी।

मलूकदास की दिल्ली यात्रा का उल्लेख परिचयी[3] तथा बेलवेडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित मलूकदास जी की बानी[4] में भी हुआ है। दिल्ली यात्रा का लक्ष्य औरङ्गजेब से मिलना था।

कबीर, दादू, नानक आदि सन्त कवियों के स्तर से मलूकदास को ऊपर उठा देने वाला उनका मुख्य गुण सेवाभाव था। कबीर आदि सन्त केवल साधक तथा धर्म सुधारक थे।

मलूकदास में सेवा भाव का उदय उनकी बाल्यावस्था से ही दृष्टिगत होता है। ५ वर्ष का अवस्था प्राप्त होने पर, जबकि उनके अन्य समवयस्क मार्ग में खेलते रहते थे, उस समय वे मार्ग के कांटे, कंकड़ हटाने में अपना समय व्यतीत करते थे। सेवा

---

१. वनिज कामरो को घर होई। ... ... परिचयी
२. कछुक बे देई बेचन को सोई। ... ... परिचयी
३. परिचयी, पृ० १७, १८, १९
४. मलूकदास जी की बानी, पृ० ४

का यही भाव उनमें आजीवन बढ़ता रहा और अपने इस गुण के कारण वे सभी सन्तों में उच्चासन के भागी हैं।

मलूकदास परोपकार में सदैव रत रहते थे।[१] खराब होने के कारण आने जाने वाले जिन मार्गों पर भी जनता को कष्ट मिलता था वे स्वयं उन्हे अपने धन व्यय से सुधरवाते थे।[२]

असहाय तथा दुखियों की सेवा करना मलूकदास की सेवाभावना का दूसरा क्षेत्र है। यात्रियों के दुख निवारण के हेतु कभी वे बटमार अथवा माग में लगने वाले चोरों को हटाते[३] और कभी दुखियों की सेवा के लिए स्वयं ही दौड़ पड़ते थे।[४] यथाशक्ति वे द्वार पर आए हुए सभी मनुष्यों की अन्न-वस्त्र से सेवा करते थे और उनके द्वार से कोई भूखा नहीं जाने पाता था।[५] वे बहुत से असहाय दुखी जनों की कन्या का विवाह करा देते थे[६], और बहुत सी हिन्दू मुसलमान विधवाओं का पालन-पोषण करते थे।[७] उनकी दया तथा सेवाभाव केवल जगत तक ही सीमित नहीं था वरन् वे पशुओं के प्रति भी दयालु बने रहते थे और अपने द्वार पर आये हुये पशु तथा कुतों तक को भी भोजन देते थे।[८] व अपने पास से खर्च करके दीन असहायों के घर बनवा देते थे और कभी-कभी उनकी छावनी-छप्पर बनवा देते थे।[९] यात्री लोग जो प्रसाद उनके लिये लाते थे उसे वे बालकों में बांट देते थे।[१०] इसी प्रकार मकर स्नान के लिये आए हुए सब साधु-सन्तों की सेवा सब भांति से करते और उन्हें सुख पहुँचाते थे।[११] रोगी,

---

१. पर कारज में बड़े समर्था। हर सो लेय न चाहै अरथा।
परिचयी, पृ० ११

२. मारग जहां लोग दुख पावैं। लाय मंजूर आप बंधवावैं।
परिचयी पृ० ११

३. कबहुँक मारग चोर छोड़ावै।

४. दुखित देख आपुहि उठि धावै।

५. यथा शक्ति सब कोई पावै। द्वारे ते भूखे नहि जावै।

६. हिन्दु तुरुक में बिधवा जितनी। छाजन भोजन पावै तितनी।

७. बहुत दुखिन की कन्या व्याही। भक्त करे हरिगुन अबगाही।

८. भूखे पसु कूकर जो आवै। दयावन्त ताहूँ अधवावै।

९. काहू के घर देय उठाई। और काहू की छानी छवाई।

१०. जात्री जो विसाह लै जावै। देई लुटाय जो बालक खावैं।

११. मकर नहान जो आवै कोई। आवत जात करत सुख होई।
एकै भांति रास करवावै। करै भार साधू सुख पावै।

दोषी, परदेशी तथा यात्री जो उनकी सेवा में आते थे, वे उन सब की सेवा करते थे।[१]

पड़ोसी तथा शरण में आए हुए व्यक्तियों की सेवा करना[२] मलूकदास की सेवा भावना का तीसरा क्षेत्र था। अपने पास पड़ोसी भूखे ब्राह्मण भाटों को वे अन्न-वस्त्र तथा अन्य उपायों से सेवा करते थे।[३]

जीवन के अन्तिम वर्ष

मलूकदास की वृद्धावस्था का समय उनके जीवन का सबसे महत्वपूर्ण काल था। जीवन की सबसे अधिक उल्लेखनीय घटनायें उनकी वृद्धावस्था में ही घटित हुई थीं। वृद्धावस्था के प्रारम्भ काल में ही उन्होंने जगन्नाथ जी की यात्रा की थी। जीवन के इन्हीं अन्तिम वर्षों में हमारे कवि ने अपने महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की थी। इसी समय उन्होंने अपने सम्प्रदाय के प्रचार तथा प्रसार के लिये देश के विभिन्न स्थानों पर अपने शिष्य बनाये, इसी समय वे यवन सम्राट औरङ्गजेब से मिले थे और इसी समय उन्होंने अपने भतीजे रामसनेही को अपने स्थान पर स्थापित किया था।

एक दिन उन्होंने अपनी देह परित्याग करने की इच्छा प्रकट की।[४] देश-देश में वैरागियों और शिष्यों ने जहां भी मलूकदास के महाप्रस्थान की बात सुनी, सभी दर्शन करने के लिए दौड़ आए, बिना किसी राग द्वेष, सहज तथा स्वाभाविक रूप से उनका शरीर क्षीण होने लगा।[५] क्षीण होते हुए शरीर की रक्षा के लिए वे किसी औषधि अथवा युक्ति का प्रयोग न करते वरन् चन्दन तथा कस्तूरी का लेप करने लगे।[६] ज्यों ज्यों महाप्रस्थान के दिन निकट आते जाते त्यों-त्यों उनके हृदय में हरि के प्रति स्नेह बढ़ता ही गया।[७]

---

१. रोगी दोषी होय जो कोई। ताहू को उपकार जो होई।
परदेशी कोऊ कहूँ ते आवै। दया करै ताहू अधरावै।

२. जो कोई जीव सरन तक आवै। ताको आवागमन मिटावै।

३, जो कोई पास परोसी रहै। आँचक कोई बात न कहै।
ब्रहमन भाट परोसी जितने। पावै रुज भूखै सब जितने।

४. अब हम तजन चहत हैं देहा। छूटे सब हित छूटे गेहा। परिचयी पृ० २०

५. सहजे छीन सो भई शरीरा। कहे कछु न देह की पीरा। वही, पृ० २०

६. औषध जुगुत कबहुँ न करै। अपनी इच्छा सों उच्चरै।
चन्दन और कुंकुम कस्तूरी। सो शरीर पर लेय भरपूरी। वही, पृ० २०

७. कछु दिन बीते सोऊ बागा। हरि से बाढ्यो अति अनुरागा॥
वही, पृ० २०

मलूकदास के अनुरागी, सन्त सारङ्गदास ने उनके महाप्रस्थान के विषय में अत्यन्त दुखी होकर पूछा।[१] उत्तर में उन्होंने कहा कि मेरे लिए प्रभु की आज्ञा आई है, अतः मैं अब चलना चाहता हूं।[२] यह सुनकर सारङ्गदास ने विनय पूर्वक कहा कि अपने स्थान पर किसी को स्थापित कर दीजिए। उत्तर में कवि ने कहा मुझे किसने स्थापित किया था। प्रभु अपने आप सब कुछ किया करते हैं।[३]

इसके पश्चात वैशाख कृष्ण चतुर्दसी बुधवार संवत् १७३९ को सिंह लगन बिता कर, तथा सब को समाधान कर और नाना रूप दिखाकर उन्होंने अपने धाम को प्रयाण किया।[४]

---

१. सारङ्गदास संत वैरागी। भक्त मलूका को अनुरागी।
सारङ्गदास करुना कर पूंछे। कही मलूक बात सब सांचे॥ वही, पृ० २०

२. प्रभु की आज्ञा हम को आई। अब हम चलन चहत हैं भाई। वही, पृ० २०

३. तब सारङ्ग बिनती सुनाई। काहू को थापिये गुसाई।
कह्यो मलूक मोहिं किन थाप्यो। करन हार प्रभु आये आपो॥
वही, पृ० २०

४. पांच मांस बीते यहि भांति। ठाढ़े रहे सभी दिन राति।
बीत चैत वैसाख जब लागा। तब मलूक जी खीरा मांगा।
एक आगरा से खीरा लाया। बारह दिन यहि भांति बिताया।
लीन्ही फांक जीभी सों चाखी। फिर आधी बरतन में राखी।

संवत सत्रह सौ उन्तालिस बुद्धवार तिथि आय।
चतुर्दसी वैशाख वदी सिंह लगन बिताय।
समाधान सब को कियो नाना रूप दिखाय।
गुरु मलूक निज धाम को चले निसान बजाय।

परिचयी, पृ० २३

मलूकदास की रचनाएँ

ज्ञान बोध

यह मलूकदास का सर्वमान्य प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के प्रथम विश्राम में ब्रह्म की भक्तवत्सलता का वर्णन मलूकदास के ग्रन्थ भक्तवच्छावली से बहुत कुछ मिलता है, जो उनके स्थान पर सर्वप्रिय ग्रन्थ है। उनमें विषय साम्य ही नहीं प्रत्युत दोनों ग्रन्थों में कहीं कहीं एक सी ही पंक्तियां भी उपलब्ध होती हैं। अतः यह निश्चय है कि ज्ञानबोध के रचयिता मलूकदास ही हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में लेखक ने तीर्थ यात्रा, भेष धारण, आश्रम त्याग, को हेय बताया है। इस ग्रन्थ में अद्वैत ब्रह्म की सर्व-व्यापकता उसकी सर्वशक्तिमता ज्ञान, भक्ति तथा वैराग्य का एकत्र वर्णित है। यही भाव मलूकदास के अन्य ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। जनता में प्रचलित तथा सन्तवानी संग्रह और मलूकदास जी की वानी में प्रकाशित कुछ शब्द तथा पद ज्ञानबोध के पदों से पूर्णतया मिलते हैं।

ज्ञानबोध की प्रामाणिकता का सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण हैं उपलब्ध प्रति। यह प्रति महन्त कुटुम्ब के श्री पुरुषोत्तम दास कक्कड़ के यहां प्राप्त हुई। यह प्रतिलिपि मलूकदास के अनन्य भक्त तथा मतावलम्बी शिष्य प्रयाग निवासी दयालदास कायस्थ से संवत् १७८४ वि० में की थी।[1] मलूकदास के एक अत्यन्त विश्वासपात्र शिष्य द्वारा तैयार की जाने के कारण यह प्रति प्रामाणिक तथा विश्वसनीय है।

ज्ञानबोध की एक प्रति मलूक दास जी की वर्तमान गद्दी कड़ा में मिलती है। इस समय यह प्रति बाबा मथुरा प्रसाद के अधिकार में है।

रतन खान

रतनखान भी मलूकदास का सर्वमान्य प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में मलूकदास ने अपने दार्शनिक विचारों को अभिव्यक्त किया है। वैराग्य, जग की क्षणभंगुरता, मुक्ति, आत्ममनन, सकल्प, विकल्प तथा आत्म पूजा आदि के जो भाव ज्ञानबोध में मिलते हैं, वही इस ग्रन्थ में भी हैं। इस ग्रन्थ में ब्रह्म के लिए उन्हीं शब्दों तथा नामों का प्रयोग किया गया है जो ज्ञानबोध में प्राप्त होते हैं। कवि ने इस ग्रन्थ की रचना

---

१. इस प्रति का विशेष विवरण ग्रन्थ के परिचय के साथ में मिलेगा।

दोहा और चौपाई में की है। जेउ, तेउ, जौन, अगवा जग के लिए आदि जो शब्द मलूकदास की प्रकाशित बानी अथवा ज्ञानबोध में मिलते हैं वे रतन खान में भी मिलते हैं। इस ग्रन्थ में भी कवि की विषय प्रतिपादन की शैली ज्ञानबोध से पूर्णतया साम्य रखती है। इस ग्रन्थ में अपने प्रत्येक कथन का, मलूकदास उदाहरणों द्वारा समर्थन करते हैं। उपमा तथा उपमानों को देकर प्रतिपादित विषयों पर उन्होंने इस प्रकार अपने विचार प्रकट किए हैं कि उनकी दुरूहता दूर हो जाती है। यह शैली मलूकदास के प्रत्येक ग्रन्थ में मिलती है। अतः शैली तथा अभिव्यक्त विचारों की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ मलूकदास की प्रामाणिक रचना ही सिद्ध होती है।

रतनखान की प्राप्त प्रतियों का विवरण ग्रन्थ परिचय के साथ में दिया गया है। रतनखान की एक प्रति लेखक को महन्त कुटुम्ब के श्री पुरुषोत्तम दास कक्कड़ से मिली। इस प्रति के प्रतिलिपिकर्ता भी मलूकदास के शिष्य दयालदास कायस्थ थे। इस दृष्टि से भी यह ग्रन्थ प्रामाणिक तथा विश्वसनीय है।

भक्तवच्छावली

डाक्टर पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल के शब्दों में इनके स्थान पर इनका सबसे उत्तम ग्रन्थ भक्तवच्छावली माना जाता है।[1] यह ग्रन्थ भी मलूकदास का सर्वमान्य ग्रन्थ है। इसमें ब्रह्म की भक्त वत्सलता का वर्णन किया है। इस ग्रन्थ तथा ज्ञानबोध की शैली में महान साम्य है। ज्ञानबोध के प्रथम विश्राम में व्यक्त ब्रह्म की वत्सलता को कुछ पंक्तियां भक्तवच्छावली से मिलती हैं। इससे यह प्रकट होता है कि ये दोनों मलूकदास विरचित ग्रन्थ हैं।

भक्ति विवेक

मलूकदास ने भगवत भक्ति का बहुत गुण गान किया है। भक्ति की महत्ता उनके कई एक ग्रन्थों में वर्णित है। परन्तु भक्ति विवेक में भगवत्-भक्ति का उल्लेख एक स्वतंत्र विषय के रूप में हुआ है। ज्ञानबोध, भक्तवच्छावली तथा रतनखान की भांति इस ग्रन्थ की रचना भी दोहा चौपाई में हुई है। इसकी भाषा अवधी है। इस ग्रन्थ में भी खड़ी बोली का वही प्रारम्भिक स्वरूप उपलब्ध होता है, जो मलूकदास की अन्य प्रामाणिक रचनाओं में है। जमराई, समै, निरवाना, कारज, तथा दृढ़ाई आदि बेसवारी के जो शब्द ज्ञानबोध में प्रयुक्त हुये हैं, वही इसमें भी मिलते हैं। सिद्धान्त समन्वय तथा विश्वास प्रतिपादन की जो शैली ज्ञानबोध के प्रवृत्ति तथा निवृत्ति के कुटुम्ब वर्णन तथा रतन खान में आद्योपान्त मिलती है वही इस ग्रन्थ में भी है।

---

१. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग १५, पृ० ८१

मलूकदास ने इस ग्रन्थ में एक विषय के समर्थन में अनेक कथाओं का उल्लेख किया है। भक्ति विवेक की प्रतिलिपि मलूकदास की वर्तमान कड़ा गद्दी के संरक्षक बाबा मथुरा प्रसाद के पास कवि के अन्य ग्रन्थों के साथ सुरक्षित है।

ज्ञान परोछि

ज्ञान परोछि का प्रतिपादित विषय उसकी प्रामाणिकता का सबसे बड़ा प्रमाण है। इस ग्रन्थ में मलूकदास ने वैराग्य, आत्मा का चिरंतन स्वरूप, सृष्टि उत्पत्ति, अष्टांग योग, प्राणायाम, परब्रह्म की अद्वैतता आदि पर अपने विचार प्रकट किए हैं। वैराग्य की परिभाषा तथा आवश्यक तत्व भक्ति विवेक में चित्रित वैराग्य के आवश्यक तत्वों से साम्य रखते हैं। आत्मा के चिरंतन स्वरूप तथा सृष्टि की उत्पत्ति का ज्ञान-बोध में कई बार उल्लेख हुआ है, और यह वर्णन उससे पूर्णतया मिलता है। इस ग्रन्थ में वर्णित योग के आठ अंग प्राणायाम तथा ब्रह्म की अद्वैतता ज्ञान बोध में वर्णित इन्हीं विषयों से हर प्रकार समता रखती है। ब्रह्म की अद्वैतता के जो भाव मलूकदास की बानी में मिलते हैं, वे भी इस वर्णन से भिन्न नहीं हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में मलूकदास के उन दार्शनिक विचारों का वर्णन मिलता है, जिनका उनके अन्य ग्रन्थों में भी उल्लेख हुआ है। दोनों में भावों का अन्तर है शैली का नहीं। अतः इसे मलूकदास विरचित ग्रन्थ मान लेना असंगत नहीं है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना दोहा चौपाई में हुई है। यही मलूकदास के प्रिय छंद हैं। ज्ञान बोध, रतन खान, भक्तवच्छावली तथा भक्ति विवेक की रचना भी विशेष रूप से इन्हीं छन्दों में हुई है। मलूकदास ने अपने अधिकतर ग्रन्थों की रचना अवधी में ही की है। ये बातें भी ज्ञान परोछि की प्रामाणिकता सिद्ध करने में सहायक प्रतीत होती हैं।

बारहखड़ी

आध्यात्मिक विचारों से पूर्ण बारहखड़ी और बारहमासे लिखने की एक परम्परा सन्तों में चिरकाल से चली आ रही है। मलूकदासी सम्प्रदाय के महन्तो में यह प्रथा चली आती है कि घर में बालकों को बारहखड़ी प्रारम्भ कराने के पूर्व मलूकदास द्वारा लिखित यह बारहखड़ी कंठस्थ करा दी जाती है। इस प्रकार यह बारहखड़ी महन्तों के कुटुम्ब की परम्परानुगत वस्तु बन गई है। यह परम्परा तथा प्रथा बारहखड़ी की प्रामाणिकता के साथ उसके महत्व को भी सिद्ध करती है। ब्रह्म की सर्वव्यापकता, सत्य अहिंसा, क्षमा, दया तथा संसार से विराग आदि जो भाव मलूकदास के अन्य ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं वे ही इसमें भी हैं, अन्तर है केवल अभिव्यंजना शैली का। बारहखड़ी की रचना अन्य ग्रन्थों की भांति अवधी तथा दोहों में हुई है।

रामअवतार लीला, ब्रजलीला तथा ध्रुवचरित

इन तीनों ग्रन्थों में श्रीराम, श्रीकृष्ण तथा ध्रुव का चरित्र वर्णित है। प्रथम दो में परब्रह्म के अवतारों का वर्णन है और तृतीय में ध्रुव की अटल भक्ति और ब्रह्म की भक्तवत्सलता का उल्लेख हुआ है। इन ग्रन्थों को देखने से प्रकट होता है कि मलूकदास अपने जीवन के पूर्वकाल में अवतारोपासक थे। इसमें कोई सन्देह का अवसर नहीं है। कारण कि मलूकदास के मकान के पास जीर्ण दशा में खडा ठाकुर-द्वारा इस बात का द्योतक है कि मलूकदास अपने जीवन के पूर्वकाल में सगुणोपासक थे। यह रामअवतार लीला, ब्रजलीला तथा ध्रुवचरित की प्रामाणिकता सिद्ध करता है। इसके अतिरिक्त इन ग्रन्थों की शैली एक अपरिपक्व लेखक की-सी है। यह बात भी इस बात को सिद्ध करती है कि इस ग्रन्थ की रचना मलूकदास ने अपने जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में की थी।

रामअवतार लीला तथा ध्रुवचरित की रचना अवधी भाषा में हुई है। इन दोनों ग्रन्थों की रचना दोहा चौपाई छदों में हुई। उन ग्रन्थों में प्रयुक्त छंद तथा भाषा ज्ञान बोध, रतनखान, भक्ति विवेक तथा भक्तवच्छावली में प्रयुक्त छंद और भाषा से पूर्णतया मिलती है। जिन छंदों और भाषा में मलूकदास ने अपने प्रारम्भिक ग्रन्थों की रचना की थी उसी का अन्त तक प्रयोग किया। यह बात ग्रन्थ की प्रामाणिकता सिद्ध करती है।

रामअवतार लीला ब्रजलीला तथा ध्रुवचरित में मलूकदास के नाम की छापें पड़ी मिलती हैं, जो उनके अन्य ग्रन्थों में मिलती हैं। रामअवतारलीला, मलूकदास के जन्म स्थान के कड़ा निकटवर्ती ग्रामों में बहुत प्रिय है। इस प्रकार ग्रन्थ की सर्वप्रियता उसकी प्रामाणिक सिद्ध करने में सहायक होती है ध्रुवचरित की उपलब्ध प्रति के प्रतिलिपिकर्ता दयाल दास कायस्थ थे जिन्होंने मलूकदास की ज्ञानबोध, ज्ञानपरोछि, सुखसागर, विभयविभूति, आदि रचनाओं की प्रतिलिपि स्वपठनार्थ प्रस्तुत की थी।

विभयविभूति

यह ग्रन्थ मलूकदास के दार्शनिक विचारों पर प्रकाश डालता है। ब्रह्म की महत्ता उसको प्राप्त करने के विविध उपाय, प्राणायाम और उसके साधन की विधि, अष्टांग योग, यौग साधन से फल तथा प्रभाव आदि अनेक विषयों पर इस ग्रन्थ में विचार प्रकट किए गए हैं। ज्ञान बोध तथा ज्ञानपरोछि के वर्ण्य विषय पर दृष्टि डालने से प्रकट होता है प्रायः यही सब विषय उन ग्रन्थों में भी वर्णित है। एक ही से कुछ विषयों का अनेक ग्रन्थों में वर्णित होना उन सभी ग्रन्थों की प्रामाणिकता सिद्ध करता है।

विभयविभूति की रचना मलूकदास की अन्य पुस्तकों की भांति अवधी भाषा तथा दोहा चौपाइयों में हुई है स्मरण रखना चाहिए कि यही मलूकदास की प्रिय भाषा थी और यही प्रिय छंद था, जिनका प्रयोग उनके अधिकांश ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। अन्य रचनाओं की भांति इस ग्रन्थ में भी कवि नाम की छापें मिलती हैं जो उसकी प्रामाणिकता सिद्ध करती हैं।

सुख सागर

इस ग्रन्थ में समय समय पर होने वाले ब्रह्म के विभिन्न अवतारों का वर्णन है। जिन प्रमाणों के आधार पर हमने मलूकदास की रामअवतार लीला, ब्रजलीला तथा ध्रुवचरित को प्रामाणिक रचनाएं सिद्ध किया है वही कारण इस ग्रन्थ के लिए भी पर्याप्त हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना भी अवधी तथा दोहा-चौपाई में हुई है। यत्र तत्र इस ग्रन्थ में भी कवि के नाम की छापें मिलतीं हैं। ज्ञानबोध, ज्ञानपरोछि, विभय-विभूति, ध्रुवचरित आदि ग्रन्थों की तरह यह भी दयालदास कायस्थ की प्रस्तुत की हुई प्रति है। इन्हीं सब कारणों के आधार पर इस ग्रन्थ को मलूकदास की प्रामाणिक रचना मान लेना असंगत नहीं है।

निष्कर्ष

प्रमाणों तथा तर्कों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि ज्ञानबोध, रतन खान, भक्तवच्छावली, भक्ति विवेक, ज्ञानपरोछि, बारहखड़ी, रामअवतार लीला, ब्रजलीला, ध्रुवचरित, विभयविभूति तथा सुखसागर मलूकदास की प्रामाणिक रचनाएं हैं। इन ग्रन्थों के अतिरिक्त मलूकदास के अनेक पद तथा साखियां भी उपलब्ध होती हैं। इनके पद तथा साखियों के अनेक संग्रह भी मिलते हैं। मलूकदास की इन उपर्युक्त प्रामाणिक रचनाओं के अतिरिक्त उनके नाम पर प्रचलित दो ग्रन्थ और हैं जिनके नाम है मलूक शतकम् और भक्तमाल, यह ग्रन्थ हमारे विचार से मलूकदास विरचित नहीं हैं। अतः यह कवि की प्रामाणिक रचनाएं नहीं हैं।

मलूकदासी सम्प्रदाय

मलूकदासी सम्प्रदाय के प्रवर्तक मलूकदास थे। मलूकदासी सम्प्रदाय की जन्मतिथि अज्ञात है। इसका कहीं कोई उल्लेख नहीं मिलता है। परिचयी में भी इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता है। परन्तु इतना तो निश्चय है कि इस सम्प्रदाय का जन्म मलूकदास के जीवन काल में ही हो चुका था। इसका कारण यह है कि परिचयी में मलूकदास द्वारा शिष्य बनाए जाने का वर्णन मिलता है। मलूकदास ने जगन्नाथ आदि स्थानों की यात्रा करने के पश्चात शिष्य बनाए थे अतः इसी समय के लगभग उन्होंने इस नवीन सम्प्रदाय को जन्म दिया था। कवि जीवन चरित्र के सम्बन्ध में इस ग्रन्थ के द्वितीय परिच्छेद में इस बात का उल्लेख हो चुका है कि अपने जीवन के ७०वें वर्ष के लगभग मलूकदास ने जगन्नाथ की यात्रा की थी। जगन्नाथ यात्रा के पश्चात ही उन्होंने शिष्यों को दीक्षा देना प्रारम्भ किया था। अतः मलूकदासी सम्प्रदाय का जन्म सवत् १७०७ के लगभग निश्चित होता है। इस सम्प्रदाय का मलूकदास के जीवन काल में अत्यधिक प्रचार रहा। इसके प्रवर्तक की सिद्धि, संयम, विश्वबन्धुत्व तथा दया आदि गुणों से प्रभावित होकर तत्कालीन जनता इस सम्प्रदाय की ओर आकर्षित हुई। थोड़े ही समय में हिन्दू तथा मुसलमान उसके शिष्य हो गए।[1] एक निराकार ब्रह्म की उपासना के मधुर तथा आकर्षक सन्देश से प्रभावित होकर अन्त्यज वर्ग भी इस सम्प्रदाय का शिष्य बना। चिरकाल से अन्त्यजों के हेतु बन्द मन्दिरों के द्वारा की गई अवहेलना से प्रेरित होकर मलूकदासी सम्प्रदाय ने उन्हें निराकार ब्रह्म की उपासना का पाठ पढ़ाया। मलूकदास के पश्चात इस सम्प्रदाय के कर्णधार रामसनेही हुए। कवि ने अपने जीवन काल में ही राम सनेही को उचित एवं आवश्यक आचारों द्वारा अपना उत्तराधिकारी बना दिया था। सथुरादास ने इसका परिचयी में सविस्तार उल्लेख किया है।[2] रामसनेही ने सम्प्रदाय का बड़ा प्रचार किया। उन्होंने सुदूर पूर्व देशों में

---

१. हिन्दू मुसलमान होव कोई। आरत जो पावै सो होई।

मलूकदास जी की बानी, पृ० ३.४

२. विनती करि तिन तिलक कढ़ायो। रामसनेही पाट बैठायो।
चादर पगिया आपन लीन्हों। तिन के सीस बांध कर दीन्हों।

परिचय, पृ० २१

इसके प्रचार के लिए यात्रा भी की। रामसनेही के समय में सम्प्रदाय की रूपरेखा बहुत कुछ निश्चित एवं स्पष्ट हो चुकी थी। विधिवत उपासना, भन्डारा तथा शिष्य दीक्षा का कार्यक्रम चलता रहा।[1] रामसनेही के जीवन काल में सम्प्रदाय ने बड़ी उन्नति की। राम सनेही प्रथम महन्त थे इनके पश्चात आठवें महन्त गंगा प्रसाद ने सम्प्रदाय का बड़ा प्रचार किया। उत्तरी भारत के प्रमुख नगरों में यात्रा करके महन्त गङ्गा प्रसाद ने शिष्य बनाये। वर्तमान महन्त हनुमान प्रसाद के शब्दों में महन्त गङ्गा प्रसाद के समय में सम्प्रदाय अपनी चरम उन्नति पर पहुँच गया था। सम्प्रदाय की आय बहुत अधिक बढ़ गई थी। भन्डारा और वार्षिक उत्सवों का समारोह कई-कई दिनों तक मनाया जाता था। तत्कालीन धनधान्य के विषय में अनेक किम्वदन्तियाँ प्रचलित हैं। महन्त गङ्गा प्रसाद के समय में एक बार मकर-संक्रान्ति के दिन प्रायः १५०० नागा कड़ा में स्नान करने आए। मध्यान्ह में उन्हें सम्प्रदाय और उसकी गद्दी के ऐश्वर्य का समाचार मिला। सब नागों ने एक मत होकर गद्दी के धनधान्य को लूटने का निश्चय किया। सायंकाल जब गद्दी पर आरती हो रही थी नागों ने एक साथ धावा बोल दिया। प्रायः एक घटे के संघर्ष के बाद महन्त और उनके शिष्यों को नागों की संख्या के आगे झुकना पड़ा। गद्दी की सम्पत्ति को नागों ने चार घंटों तक लूटा। तभी से कड़ा की गद्दी निर्धन हो गई। सदाव्रत और परमार्थ में व्यय होने वाले धन के अभाव में धीरे धीरे उसके सभी उत्सव और भन्डार आदि बन्द हो गए। गङ्गा प्रसाद के पश्चात महन्त नन्दसुमेर दास हुए जो बहुत कम समय जीवित रहे। उनके पश्चात महन्त अयोध्या प्रसाद ने पतनोन्मुख सम्प्रदाय में पुनः जीवन और शक्ति का संचार किया। अयोध्या प्रसाद ने उत्तरी भारत की सभी छोटी बड़ी रियासतों में जाकर सम्प्रदाय के लिए धन एकत्र किया। उसी समय सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का समुचित प्रचार हुआ फलतः शिष्यों की संख्या में यथोचित वृद्धि हुई। महन्त अयोध्या प्रसाद ने मलूकदास के ग्रन्थों का संग्रह और जीर्णोद्धार किया। नष्टप्राय ग्रन्थों की नवीन प्रतिलिपियां करवाई गई। परन्तु सम्प्रदाय अधिककाल तक उन्नति के पथ पर अग्रसर न रह सका। अयोध्या प्रसाद को अपने शिष्यों की निष्क्रियता और सम्प्रदाय के पतन पर हार्दिक दुख रहा। किम्वदन्ती है कि महन्त अयोध्या प्रसाद अपने जीवन के अन्तिम दिवस सायंकाल के समय भोजन करके उठे उनके बाद उसी काल में उनके पुत्र भोजन करने लगे। पास में कई शिष्य बैठे थे। बालक ज्यों ज्यों खाना खाते जाते त्यों त्यों दीपक का प्रकाश क्षीण होता जाता। एक

---

१. परिचयी में रामसनेही द्वारा किए गए भन्डारा का वर्णन प्रायः ३ पृष्ठों में हुआ है।

शिष्य ने कई बार दीपक के प्रकाश को बढ़ाने का प्रयत्न किया, पर उसके प्रयास व्यर्थ हुए। उसे चिन्तित देख कर महन्त अयोध्या प्रसाद ने कहा कि अब दीपक बुझ रहा है, हमेशा के लिए, गुरू की यही इच्छा है, उसकी इच्छा का विरोध मत करो। इतना कह कर वे पलंग पर लेट गए। उनके प्राण-पखेरू कब अमर लोक की ओर उड़ गये यह किसी को पता भी न लगा। उनके पश्चात कृष्णप्रसाद तथा ब्रजलाल महन्त हुए पर इनमें से किसी में भी इतनी योग्यता न थी कि सम्प्रदाय को पुनः उन्नति के मार्ग पर ला सकते। ब्रजलाल की मृत्यु पर उनके परिवार में महन्त पद के लिये बड़ा कलह हुआ। इस कलह में सम्प्रदाय की शक्ति और भी क्षीण हो गई। चिरकाल से सुरक्षित ग्रन्थ तथा चित्र नष्ट हो गए। जो बचे उन्हें विभिन्न व्यक्तियों ने दबा लिया। इसी कलह में औरंगजेब द्वारा प्रदत्त मलूकदास का परवाना भी नष्ट हो गया।

मलूकदास के समय में सम्प्रदाय का लक्ष्य निराश एवं त्रस्त जनता को आशा का प्रकाश प्रदर्शित करना था। अतः इसे जनता का सम्प्रदाय कहना अधिक उपयुक्त होगा। प्रस्तुत सम्प्रदाय ने अपने प्रवर्तक के समय में हिन्दू तथा मुसलमानों की सीमाओं का उल्लंघन कर जनता की सर्वप्रियता प्राप्त की। मलूकदास के समय में इस सम्प्रदाय से हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही समान रूप से प्रभावित हुए। परिचयी में फतेह खां तथा कुछ अन्य मुसलमानों के शिष्य होने का उल्लेख मिलता है। किम्वदन्ती है कि जब मुसलमानों की अधिक संख्या मलूकदास की शिष्य बनने लगी तो कड़े के फौजदार ने औरंगजेब को इस बात की सूचना दी। औरंगजेब ने इसी बात को स्पष्ट करने के लिए मलूकदास को ३ अहदियों को भेज कर बुलवाया जिनमें से दो मार्ग ही में मर गए और तीसरे भक्ति-भावना में अनुरंजित फतेह खां ने जा कर मलूकदास को सादर आलमगीर का फरमान सुनाया। मलूकदास के व्यक्तित्व और उनके सम्प्रदाय से प्रभावित होकर फतेह खां नौकरी छोड़ कर कड़े में ही रहने लगा। परन्तु अब इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत मुसलमान शिष्य नहीं पाए जाते और न वर्तमान महन्त उन्हें दीक्षा देना ही उचित समझते हैं। प्रस्तुत सम्प्रदाय के अन्तर्गत गृहस्थ और साधू अनुयायी भी पाये जाते हैं। विशेष रूप से उल्लेखनीय यह है कि इस सम्प्रदाय के अनुयायी साधु वेश कमंडल आदि धारण करते हैं यद्यपि मलूकदास ने इन बाह्याचारों की कटु आलोचना की है। साधू सन्त शिष्यों का कमंडल वेशभूषा आदि धारण करना बाद के विकास हैं। मलूकदासी सम्प्रदाय के अनुयायियों में से अन्त्यज वर्ग अधिक था। अन्त्यजों में विशेषतया कोरी, चमार और पासी शिष्य अभी तक मिलते हैं। वर्तमान काल में कोरी और चमार शिष्यों की संख्या अधिक मिलती है। कुलीन मनुष्य भी इस सम्प्रदाय के शिष्य हुये। कुलीनों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा खत्री इस सम्प्रदाय के शिष्य हैं। उन्नाव जिले में क्षत्रिय शिष्य अधिक पाये जाते हैं। इलाहाबाद

जिले में ब्राह्मण और खत्री शिष्यों की संख्या ज्ञात नहीं है। वर्तमान महन्त हनुमान प्रसाद को भी आय-व्यय का कोई ऐसा लेखा ज्ञात नहीं है जिससे कि अनुयायियों की संख्या ज्ञात हो सके। जनसंख्या रिपोर्ट, डिस्ट्रिक्ट गजेटियर तथा क्रुक्स लिखित ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स इन इंडिया में भी मलूकदासी सम्प्रदाय के अनुयायियों का कोई उल्लेख नहीं मिला। यह भी ठीक-ठीक नहीं ज्ञात है कि अपने जीवन काल में मलूकदास ने कितने शिष्यों को दीक्षा दी थी। परन्तु परिचयी में दयालदास, सुदामादास, उदयराम, केशवदास, हृदयराम, गरीबदास, हाथीराम, रामदास, मोहनदास, पूरनदास, लालदास आदि शिष्यों का उल्लेख हुआ है।[1]

मलूकदासी सम्प्रदाय में गुरू की प्रतिष्ठा को अत्यधिक मान दिया गया हैं। गुरू सन्मार्ग-प्रदर्शक है। वह अज्ञान अंधकार का निवारक है। वह हरिनाम रूपी पोत का कुशल केवट है। वह औघट, घाट दुर्गम और सुगम सभी मार्गों का गम्भीर ज्ञाता है। गुरु, गोविन्द और सन्त में कोई अन्तर नहीं है। यह तीनों एक दूसरे की प्रतिमूर्ति मात्र हैं। उसकी कृपा से संसार की सभी दुर्लभ वस्तुएँ सुलभ हो जाती हैं। शिष्य बनाते समय दिए गए मन्त्र में भी गुरु की महिमा तथा प्रतिष्ठा का उपदेश रहता है। परिचयी में भी गुरु की महिमा के साथ ही साथ गुरु बालक की महत्ता का उल्लेख

---

१. कायथ एक प्रयाग को वासी। नित अनुमान मलूक उपासी।
सो सुनि धायो सन्तन साथा। दरसन कियो चरन धर माथा।
भये दयाल नाम कहि दीन्हा। अन्तरवट तेहिं सीतल कीन्हा।
एक और दास सुदामा। भजन में रह्यो आठौं जामा।
राम दास उदय रामा। ... ...
केशव दास रहै गुजरात। दिव्य दृष्टि कहै सब बात।
गरीब दास और हाथीराम। दक्षिण देश प्रकट है नाम।
असफाबाद में हिरदे राम। बहुत जीव को कीन्हा काम।
राम दास काबुल में रहे। ... ...
मोहनदास रहे मुलतान। ... ...
सीता कोयल रहै पूरनदास। ... ...

परिचयी पृ० १५.१६

तथा : लाल दास शिष्य मस्ताना। ... ...।

परिचयी, पृ० २२

हुआ है। मलूकदास के शब्दों में दान, यज्ञ तथा तीर्थ आदि में रत रहता हुआ भी गुरु का निन्दक नर्क में पड़ता है।[1]

मलूकदासी सम्प्रदाय में दीक्षोत्सव बड़े समारोह के साथ होता है। यह सम्प्रदाय का अत्यन्त महत्वपूर्ण उत्सब होता है। महन्त या गुरू समस्त शिष्यों की उपस्थिति में नवीन व्यक्ति को दीक्षित करता है। इस उत्सव के प्रारम्भ में शिष्य होने के लिए उत्सुक व्यक्ति अपने बाल बनवा कर और स्नान करके गुरु के पास जाता है। गुरु उसे परब्रह्म का बोध कराता है। उसके पश्चात मद्य, माँस, कामिनी, कंचन के परित्याग तथा नित्य स्नान, मनसा शुद्ध रहने, सत्य अहिंसा और अस्तेय का पालन करने का उपदेश देता है। इसके पश्चात गुरू पूछता है कि इन सब का पालन करोगे। शिष्य होने के लिये इच्छुक व्यक्ति स्वीकारात्मक शब्द कहता हुआ गुरू के चरणों में मस्तक रख देता है। इसके बाद गुरू उस व्यक्ति के सर पर कपड़ा डाल कर कान में राम त्राटक मंत्र सुनाता है। मंत्र पूर्ण होने पर वह व्यक्ति पुनः गुरू के चरणों पर मस्तक रख देता है। इसके पश्चात शिष्य अपनी परिस्थिति के अनुसार दीन-हीनों तथा सम्प्रदाय के प्रचार के लिए श्रद्धापूर्वक धन अर्पित करता है। इसी अवसर पर अर्द्ध-रात्रि तक कीर्तन तथा जागरण होता है। कीर्तन के अन्त में मलूकदास की जयध्वनि के साथ उत्सव समाप्त होता है।

मलूकदास के जीवन काल में प्रस्तुत सम्प्रदाय बहुत लोकप्रिय बन गया था, इस बात का उल्लेख पहले हो चुका है। भारतवर्ष की सीमा का उल्लंघन कर मलूकदास के उपदेश काबुल, नैपाल तथा मुल्तान जैसे सूदूर देशों में पहुँच गए थे। मलूकदास के जीवन काल में ही इस सम्प्रदाय की गद्दियां कड़ा के अतिरिक्त प्रयाग, इस्फहाबाद, लखनऊ, मुल्तान, सीताकोयल, काबुल, गुजरात, नैपाल आदि स्थानों में स्थापित हो चुकी थीं। मलूकदास की मृत्यु के पश्चात जगन्नाथपुरी में भी गद्दी की स्थापना हुई।[2]

---

१. दान जग्य तीरथ वह करै। गुरु को निंदक नरक में परै।
माया लाग गुरु निंदा करै। ते नर अधम अहोगति सहै।
कहे मलूक तुम सुनौ सनेही। विमुख शिष्य माया पद नेही।
जो गुरु को अपमान करै। कुटुम्ब सहित रसातल परै।
परिचयी पृ० २१

तथा :

देखिये मलूक दास जी की बानी, पृ० ३२

२. मलूकदास जी की बानी, पृ० ५
परिचयी पृ० १५.१६, २२

महन्त

प्रस्तुत सम्प्रदाय के सर्वप्रथम महन्त रामसनेही जी थे। अपने जीवन का अवसान निकट जान कर मलूकदास ने अपने भतीजे रामसनेही को आवश्यक रीतियों द्वारा महन्त पद पर स्थापित कर दिया था। महन्त पद पर रामसनेही की स्थापना का हाल परिचयी में सविस्तार वर्णित है। रामसनेही के पश्चात महन्त परम्परा में कृष्णसनेही, ठाकुरदास, गोपालदास, कुंज बिहारी दास, रामसेवक, शिव प्रसाद, गङ्गा प्रसाद, नन्द सुमेर दास, अयोध्या प्रसाद, कृष्ण प्रसाद तथा ब्रजलाल हुए।

भंडारा

परिचयी में रामसनेही के समय में होने वाले प्रथम भण्डारा का सविस्तार उल्लेख मिलता है। महन्त गंगा प्रसाद के समय तक मलूकदास के महाप्रस्थान दिवस को भण्डारा होता था। परन्तु धन के अभाव के कारण बाद में यह उत्सव बन्द हो गया। महन्त अयोध्या प्रसाद ने अपने परिश्रम से इसको पुनः संचालित किया। परन्तु यह सभी उत्सव अयोध्या प्रसाद के जीवन के साथ ही समाप्त हो गये। भण्डारा के अवसर पर रात्रि के प्रथम प्रहर में कड़ाह प्रसाद का भोग लगाया जाता था। उस उत्सव पर मालपुवा का प्रसाद वितरित किया जाता था।

सम्प्रदाय की गद्दी पर पूजा करने वाला व्यक्ति बाबा कहलाता है। इस समय कड़ा की गद्दी पर बाबा मथुरा प्रसाद पुजारी हैं। पुजारी भी गृहस्थी में रहता हुआ ब्रह्मचर्य मय जीवन व्यतीत करता है। पुजारी का पद न पैतृक ही है और न कोई वेतन ही निर्धारित है। परन्तु संयोगवश यह पद चिरकाल से बाबा मथुरादास के कुटुम्ब में चला आ रहा है।

गद्दी पर पूजा दिन में दो बार—प्रातः तथा सायंकाल होती है। उपासना के समय सम्प्रदाय के सभी शिष्य एकत्र होते हैं। फिर उपासना के पश्चात उसी समय सम्प्रदाय के सभी शिष्य तथा उपस्थित दर्शक कीर्तन करते रहते हैं। प्रातःकाल उपासना शालिगराम के स्नान और मलूकदास की चरण पादुका के प्रक्षालन से प्रारम्भ होती है। उसके पश्चात शालिगराम, मलूकदास का चित्र, चरण पादुका तथा उनकी गद्दी पर चन्दन अक्षत पुष्प चढ़ाये जाते हैं। उसके बाद आरती होती है। आरती के बाद मिष्ठान का भोग लगाया जाता है। चरणामृत के साथ यही प्रसाद उपस्थित व्यक्तियों में वितरित होता है। उपासना के पश्चात गद्दी भवन के प्रत्येक कमरे में चरणामृत छिड़का जाता है। रात्रि में केवल कपूर की आरती होती है और तत्पश्चात मिष्ठान और दूध का भोग लगता है। भोग के पश्चात एक घंटे तक कीर्तन होता है और यह बैठक मलूकदास की जयध्वनि के साथ समाप्त होती है।

मलूकदासी सम्प्रदाय के अनुयायी नाम जप एवं उपासना प्रातःकाल पूर्व मुख और सायंकाल पश्चिम मुख होकर करते हैं। नाम जप या उपासना के लिए किसी विशेष आसन की आवश्यकता नहीं है। सम्प्रदाय के अनुयायी अब मूर्ति पूजा भी करते हैं और नियमानुसार व्रत तथा धार्मिक त्यौहार भी मनाते हैं। नागपंचमी, दीपावली, विजय-दशमी, होली, रामनवमी, श्री कृष्ण जन्म अष्टमी आदि पर्व साधारण गृहस्थों की भांति मनाते हैं। व्रत रखना तथा धार्मिक त्यौहारों में विश्वास रखना आदि वाह्याचार बाद के विकार हैं, कारण कि मलूकदास ने आत्महनन, तप, व्रत तथा मूर्तिपूजा आदि की बड़ी तीव्र आलोचना की है। सम्प्रदाय में इन नवीनताओं का समावेश कब हुआ यह ठीक प्रकार से नहीं ज्ञात है।

मलूकदास और राम सनेही के समय में सम्प्रदाय के अनुयायियों में खानपान का भेदभाव नहीं था। भण्डारा या वार्षिक भोज में सब शिष्य चाहे वे कुलीन हों या अन्त्यज साथ ही बैठ कर भोजन करते थे, समानता का वह भाव अब समाप्त हो चुका है। यह भेदभाव सम्बन्धी विचारों का जन्म और प्रचार मलूकदास के बाद के विकास हैं।

मलूकदासी सम्प्रदाय में प्रणाम करने की दो रीतियां प्रचलित हैं। शिष्य गुरु या महन्त को पृथ्वी पर पेट के बल लेट कर साष्टांग प्रणाम करता हुआ उसके चरणों पर अपना मस्तक रख देता है। गुरु या महन्त उसे धर्म में प्रवृत्त तथा सन्मार्गगामी होने का आशीर्वाद देता है। सम्प्रदाय का एक व्यक्ति अपने समान पद वाले दूसरे व्यक्ति को दोनों हाथ जोड़ कर मस्तक झुका कर प्रणाम करता हुआ जय मलूक जय गुरु कहता है। इस सम्प्रदाय के अनुयायियों में यह प्रथायें अब भी चली आ रही हैं। यद्यपि अब कहीं कहीं इसके अपवाद भी देखे जाते हैं। कुछ लोग जयराम कहकर प्रणाम करते हैं। प्रायः कुछ अनुयायी एक हाथ मस्तक तक उठाकर जय मलूक जय राम कहते हैं।

मलूकदासी सम्प्रदाय के अनुयायी मृत की अन्त्येष्टि क्रियाओं के सम्बन्ध में परम्परानुगत प्रथाओं का पालन करते हैं। मलूकदास के समय की प्रचलित प्रथाओं का आज भी अनुसरण होता है। प्रस्तुत सम्प्रदाय के अनुयायी मृत छोटे बालकों को गङ्गा में प्रवाहित कर देते हैं। जो व्यक्ति बड़ी अवस्था में मरते हैं उनका दाह संस्कार होता है। दाह संस्कार के पश्चात वर्णाश्रम एवं लौकिक परम्पराओं के अनुसार गात्र, क्रिया, कर्म, गोदान, पिंडदान दिया जाता है। पिंडदान के पश्चात प्रत्येक व्यक्ति अपनी परि-स्थिति के अनुसार भण्डारा करता है। भण्डारा में मृतात्मा की शान्ति के लिए मलूकदास से प्रार्थना की जाती है। इस प्रार्थना में सम्प्रदाय के अनुयायियों के अतिरिक्त अन्य धर्म तथा सम्प्रदायों के अनुयायी व्यक्ति भी सम्मिलित हो सकते हैं। भण्डारा में

2665

मलूकदास के चाम का मालपुवा प्रसाद रूप में वितरित होता है। परिचयी के लेखक ने मलूकदास की अन्त्येष्टि-क्रिया का सविस्तार वर्णन किया है जिसका उल्लेख प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय अध्याय में हो चुका है।

नियम

मलूकदासी सम्प्रदाय में निम्नलिखित २१ नियम प्रचलित हैं। प्रत्येक शिष्य को उनका पालन करना बाध्य है। दीक्षा के समय नए शिष्यों को ये नियम सुनाये जाते हैं और महन्त उनसे प्रतिज्ञा लेता है कि वह आजीवन इन नियमों का पालन करेगा। सक्षेप में यही नियम सम्प्रदाय के सार तत्व हैं। इन्हीं के आधार पर सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का निर्माण हुआ है। मलूकदास के ग्रन्थों में भी इन्ही नियमों का बारम्बार उल्लेख हुआ है। नियम निम्नलिखित हैं :

१. प्रत्येक अनुयायी को निराकार ब्रह्म की उपासना मनसा वाचा कर्मणा करनी चाहिये।
२. गुरु गोविन्द के पथ का प्रदर्शक है।
३. गुरु और गोविन्द में कोई अन्तर नही है। दोनों एक दूसरे के प्रतिरूप हैं।
४. सन्त गुरु और गोविन्द एक ही हैं। इनकी सेवा निष्काम करनी चाहिये।
५. दया सभी मतों का मूल है। इससे रहित तीर्थों में भ्रमण करता हुआ मानव नर्क में जाता है।
६. सत्य में रत मानव ब्रह्म के निकट रहता है।
७. मांस चाहे बकरी का हो या गाय का सब बराबर है। इसका सेवन करने वाला व्यक्ति अवश्य ही नर्क का भागी होता है।
८. मदिरा बुद्धि एवं मति विनाशक है। यह संयमी को भी सन्मार्ग से च्युत कर देती है।
९. मनसा वाचा कर्मणा प्राणीमात्र के साथ द्रोह या हिंसात्मक वृत्ति का परित्याग करना चाहिये। अहिंसा में रत रहकर समस्त जीव, पदार्थ तथा वृक्षों के प्रति दया करना चाहिये।
१०. अस्तेय का पालन करना परमावश्यक है।
११. क्षमा, शौच तथा मितयाहार प्रधान दैवी गुण हैं। इनको धारण करने पर ही मानव की आध्यात्मिक उन्नति होती है।
१२. सन्तोषी मनुष्य ही सबसे अधिक सुखी है। मन के संकल्प विकल्प शरीर के लिए अत्यन्त दुखदायी हैं।
१३. स्वाध्याय और नाम जप परम कर्तव्य हैं।

१४. वाह्याडम्बरों से भजन में बाधा पड़ती है अतः इसका परित्याग करना चाहिये।

१५. वादविवाद करना असुर का काम है। इसका परित्याग कर के मौन होकर नाम जप करना चाहिये।

१६. ज्ञान, भक्ति और वैराग्य एक ही लक्ष्य पर पहुँचने के तीन साधन हैं। नाम इन सबों के मूल में है।

१७. अपशब्द, गर्व, असत्यभाषा तथा श्राप देना आदि दुष्टों के कर्म हैं। इनको धारण कर मानव मुक्ति की संकरी गली में नहीं बढ़ सकता है।

१८. संसार विनाशशील और क्षणिक है।

१९. मलूकदासी सम्प्रदाय प्रत्येक जाति तथा वर्ग के मनुष्यों के लिये है।

२०. प्रत्येक स्थान, वस्तु तथा पदार्थ में ब्रह्म विद्यमान है।

२१. लोभ सब पापों का मूल है। इसका परित्याग करना चाहिये।

●

मलूकदास के राम

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम अध्याय में इस बात का उल्लेख हो चुका है कि मलूकदास के जन्मकाल में अकबर की धार्मिक नीति कितनी उदार थी[1] और उसके पश्चात अन्य सम्राटों की धार्मिक नीति किस प्रकार हिन्दू विरोधी होती गई जिसकी उग्रता औरङ्गजेब के राज्य काल में दृष्टिगत होती है। धार्मिक विरोध के कारण ही हिन्दुओं के सहस्त्रों मंदिर नष्ट कर दिए गए। हिन्दुओं पर भांति भांति के कर लगाये गये और उन्हें उत्पीड़ित करने के हेतु नाना प्रकार से प्रयत्न किये गये। हिन्दू तथा मुसलमानों के मध्य में दो जातियों का विरोध नहीं था, वरन् दो संस्कृतियों का संघर्ष था। हिन्दू मूर्ति पूजक थे एवं मुसलमान मूर्ति भंजक। मुसलमानों की दृष्टि से एक अल्लाह और उसके रसूल मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी की पूजा करना कुफ्र था। इसके विरोधी दूसरी ओर हिन्दू थे जिनके यहां तैंतीस कोटि देवताओं की उपासना की जाती थी। मुसलमान केवल एक देवता के उपासक थे और हिन्दू बहुदेवता वादी। आचार विचार की ऐसी ही बातों से दोनों जातियों के बीच द्वेष तथा वैमनस्य का विस्तृत सागर लहराता था जिसको पाटने का प्रयत्न संतों ने बहुत किया, उन्हीं सन्तों में एक विशिष्ट स्थान के अधिकारी मलूकदास थे।

एकेश्वरवादी यवन एवं बहुदेववादी हिन्दुओं के मध्यस्थ विरोधी भावनाओं के उपशमन के हेतु मलूकदास ने भी एक ही ईश्वर की मान्यता का उपदेश दिया। मुसलमानों की असहिष्णुता ने मलूकदास की एक ईश्वर की भावना का उपदेश सहन कर लिया। हिन्दुओं के लिये भी एकेश्वरवाद कोई नवीन बात न थी। मलूकदास के बहुत पूर्व कबीर, नानक, दादू आदि सन्तों ने इसी राग को अलापकर दोनों जातियों में एकता के भाव उत्पन्न किये थे। एक ईश्वर की उपासना स्थापित करने के लिये मलूकदास हिन्दू तथा मुसलमानों से एक स्वर में कहते थे कि एक ही सर्वव्यापी सबका निर्माता है, उसकी महिमा का आदि अन्त नहीं है, वही एक ब्रह्म समस्त संसार का पालक है।[1] परब्रह्म सबके साथ, चाहे वह हिन्दू हो अथवा मुसलमान, एक सा व्यवहार करता है,

---

१. सर्वव्यापी एक कोहारा। जाकी महिमा अपार न पारा।
हिन्दू तुरुक का एकै करता। एकै ब्रह्म सबन का भरता।। शब्द संग्रह।

उसमें भेद भाव की प्रवृत्ति नहीं है, वह हिन्दू तथा तुरुक मुसलमान के साथ समता का व्यवहार करता है।[1] मलूकदास दूसरे ब्रह्म की कल्पना से आश्चर्यान्वित रह जाते हैं, जब एक (इस) जगत का एक ही ब्रह्म निर्माता हैं तो दूसरे ब्रह्म का निवास स्थान कहां है ?[2] उनके मतानुसार एक परब्रह्म के अतिरिक्त द्वितीय की कल्पना वही कर सकता है जो अपने पिता को नहीं जानता अर्थात् द्वितीय परब्रह्म को सत्ता में विश्वास करना उसी प्रकार है जिस प्रकार अपने पिता को न जानता हुआ मनुष्य दूसरे को अपना पिता मान लेता है।[3] कवि के अनुसार एक ही ब्रह्म मंदिर और मस्जिद में निवास करता है, उसी की अनन्त सत्ता सर्वत्र फ़ैली है, उसमें द्वैत भाव नहीं है।[4]

कबीर भी हिन्दू तथा मुसलमानों से परब्रह्म की एक सत्ता के विषय में कहते हैं।

कहै कबीर एक एक जपहु रे हिन्दू तुरुक न कोई। कबीर ग्रंथावली। १०६।५७

हिन्दू तुरुक का कर्ता एकै ताकी गति लखी न जाई। वही, १०६।५८

१. पारब्रह्म सब सम करि जानै। हिन्दू तुरुक एक करि मानै। शब्द संग्रह

२. एक जगत का एकै करता। दोसर ब्रह्म कहां है रहता। वही

३. दुइ का होय तो दुइ कर मानै। पारब्रह्म का एकै जानै। ज्ञानबोध

कबीर के शब्दों में बहुदेववादी एक व्यभिचारिणी नारी के समान है जो अपने पति को त्याग कर अन्य से प्रेम करती है या उस वेश्या-पुत्र वत् है जो अपने वास्तविक पिता को नहीं जानता।

नारि कहावै पीव की रहै और संग सोय।
चोर सदा मन में बसै खसम खुसी क्यों होय॥

सन्त वानी संग्रह, भाग १, पृ० १४७

तथा : राम पियारा छांड़ि कर करै आन को जाप।
वेस्वा केरा पूत ज्यूं कहै को सूं बाप॥

कबीर ग्रन्थावली ६।२२

४. मंदिर महाजित एक वसंत है तामें भाव न दूजा॥

एक ही परब्रह्म की सर्वभौमिकता के कारण कबीर उसे मंदिर अथवा मस्जिद की सीमाओं के अन्तर्गत सीमित कर देना अनुचित समझते हैं। इसी कारण वे पूछते हैं कि मुसलमानों के हेतु खुदा मस्जिद में है और हिन्दुओं के लिए मंदिरों में तो क्या मंदिर मस्जिद रहित स्थानों में ब्रह्म का निवास नहीं है ?

अतः मलूकदास ने अपने दृढ़ स्वर में एक ब्रह्म की सर्वमान्यता का उपदेश दिया और हिन्दू तथा मुसलमानों के हृदय में इन्हीं भावों को स्थापित करके उनके अन्तर्गत स्थित महान भेदभाव को समाप्त कर देने का प्रयत्न किया। अब हम मलूकदास की इस एक ब्रह्म सम्बन्धी धारणा का विशेष रूप से विश्लेषण करेंगे।

सामान्य रूप से अभी तक मलूकदास अपने ब्रह्म विषयक विचारों में कबीरदास के अनुयायी समझे जाते थे। हिन्दी साहित्य के विद्वान[1] उनकी और कबीरदास की ब्रह्म सम्बन्धी धारणा को एक मानते रहे हैं परन्तु तथ्य इसके विरुद्ध है। कबीर के साहित्य को पढ़ने वाले यह भली भांति जानते हैं कि कबीर अवतारवाद के कितने कठोर आलोचक थे।[2] वे देवकी के गर्भ से उत्पन्न और किंचित दधि माखन के हेतु गोप कुमारियों को तंग करने वाले कृष्ण को ब्रह्म अथवा ब्रह्म का अवतार नहीं मानते हैं। दशरथ सुत से ब्रह्म का कोई सम्बन्ध नहीं है। उनके मतानुसार दशरथ सुत का नाम राम इसी प्रकार से है जैसे कि कोई व्यक्ति अपने पुत्र का नाम परमेश्वर अथवा महेश्वर रख दे परन्तु इन नामों से वह बालक परमेश्वर अथवा महेश्वर नहीं बन जायगा। कबीर निर्गुण तथा निराकार परब्रह्म के उपासक थे।[3] उनके कथनानुसार 'दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना। राम नाम कर मरम है आना।' दूसरी ओर तुलसीदास जी सगुणवाद के पूर्ण समर्थक हैं। वे दशरथ सुत राम को ही ब्रह्म व्यापक तथा परमानंद परमेश्वर मानते हैं।[4] परन्तु मलूकदास के ब्रह्म विषयक विचार इन निर्गुण तथा सगुण धाराओं के सबसे महान दोनों मांझियों से भिन्न हैं। वे इस क्षेत्र में कबीर एवं तुलसी के मध्यस्थ हैं। मलूकदास का कबीर और तुलसी से ब्रह्म विषयक विचारों में निम्नलिखित बातों पर मतभेद हैं :

ऊपर इस बात का उल्लेख हो चुका है कि कबीर निर्गुण और तुलसी सगुण ब्रह्म

तुरुक मसीह देहुरै हिंदू दुहुँठां राम खुदाई।
जहां मसीति देहुरा नाही तहं काकी ठकुराई॥
कबीर ग्रन्थावली, पृ० १०६।५८

१. देखिये निर्गुण स्कूल आफ हिन्दी पोयट्री, डा० बड़थ्वाल, पृ० ३३

२. कबीर ग्रन्थावली, पृ० २४२,२४३

३. ।१। निर्गुण राम जपहु रे भाई, अविगति की गति लखी न जाई।
कबीर ग्रंथावली. पृ० ४६

।२। निरगुन ब्रह्म कथौ रे भाई। जा सुमिरत सुधि बुधि मति पाई।

४. राम ब्रह्म व्यापक जग जाना। परमानंद परेस पुराना॥
रामचरित मानस, बालकांड, दोहा ११६

के कितने प्रबल समर्थक थे। कबीर ने निर्गुण ब्रह्म के अवतार लेने को निर्मूल माया भ्रामक तथा पूर्णतया असत्य माना है[1] और तुलसी ने दशरथ सुत राम को ही ब्रह्म, चिरन्तन तथा सत्य कहा है, परन्तु मलूकदास के विचार से परब्रह्म अविगत, अगम, अगोचर अलेख निर्गुण तथा निराकार होते हुये भी अवतार लेता है।[2] उन्होंने अपनी रचनाओं में कहीं भी अवतारवाद की आलोचना नहीं की वरन् अपने ग्रंथ सुखसागर में अनेकानेक अवतारों का वर्णन किया है। यहां पर उल्लेख कर देना आवश्यक है कि सुखसागर में वर्णित अवतार को उस निराकार का अंश मात्र माना है।

तुलसीदास जी की दृष्टि से ब्रह्म अथवा राम भक्तों के प्रेम से वशीभूत होकर अवतार लेते हैं। भक्तों के प्रेम और अनुग्रह से आकर्षित होकर महाप्रभु स्वयं उत्पन्न होते हैं और उन्हें परम पद अथवा सद्गति प्रदान कर के कृतकृत्य करते हैं।[3] परन्तु मलूकदास का विचार तुलसीदास जी के विचार से भिन्न है, उनके मत से भक्त तो स्वयं अपनी साधना और सच्ची लगन के कारण परब्रह्म की दिव्य ज्योति के दर्शन पाकर परम गति को प्राप्त होता है। प्रभु दुष्टों या असुरों का नाश करने के लिये अवतार लेते हैं। और इसी परम पद को प्राप्त होने के हेतु खल जन विरोध भक्ति करते हैं।[4]

गोस्वामी तुलसीदास जी के शब्दों में दशरथ पुत्र राम का अवतार ही सत्, चित, आनन्दमय है[5], वही चिरन्तन एवं अनादि तथा अनन्त है[5], परन्तु गोस्वामी जा के इस मत से भी मलूकदास का मत वैषम्य है। उनके मत से ब्रह्म निराकार तथा निर्गुण है और अवतार किंचित समय के लिये है। वह अल्प काल के लिये संसार में अवतरित होता है और लक्ष्य पूर्ति के पश्चात वह अनन्त शक्ति में उसी प्रकार लीन हो जाता है जिस प्रकार सागर से निकाला हुआ जल बिन्दु उसी सागर में डाल देने से पुनः अस्तित्व

---

१. अवधू आवै जाय सो माया।

२. निर्गुण ब्रह्म सगुण होइ आवै। असुर मारि करि भक्ति देखावै॥
भक्ति विवेक

३. अगुन अरूप अलख जग जोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥
रामचरित मानस, बालकांड, ११६

४. ताते विरोध भक्ति खल करहीं। जेहि कारण प्रभु नर तन धरहीं॥
भक्ति विवेक

५. रामचरित मानस, बालकांड, ११६ दोहा

५. वही, राम जन्म स्तुति १९२ दोहा

हीन हो जाता है।[1] विरोध भक्ति करने वाले असुरों को सद्गति प्रदान कर अवतार उसी निराकार ब्रह्म में विलीन हो जाते हैं। अतः अवतार मलूक दास के शब्दों में थोथे बांट अथवा सारहीन आलम्बन है जिनको ग्रहण कर भवसागर नहीं पार किया जा सकता है।[2]

रामचरित मानस के बालकांड में रामविषयक श्री पार्वती जी की शंका का समाधान करते हुये शंकर जी कहते हैं :

अस निज हृदय विचारि, तजि संसय भजु राम पद।
सुनु गिरि राज कुमारि, भ्रमतम रविकर वचन मन मम ॥[3]

और बाद में "रघुकुल मनि मम स्वामि सोइ कहि सिव नायेउ माथ" उपर्युक्त उद्धरणों को ध्यान पूर्वक पढ़ने से प्रकट हो जाता है कि गोस्वामी जी अवतारी राम को न केवल मनुष्यों से पूजित मानते हैं वरन् शिव जी तथा अन्य अगणित देवों तथा वेदों द्वारा पूज्य मानते हैं परन्तु मलूकदास अवतारों की उपासना के विरोधी है। अवतारों को उत्पत्ति निर्गुण ब्रह्म से होती है। इसी कारण वे निर्गुण ब्रह्म को ही मूल मानते हैं। अवतार ऋद्धि, सिद्धि, आत्महनन, गृहस्थाश्रम त्याग, को लेखक महत्वहीन मानकर अविगत मूल की पूजा करने के लिये उपदेश देता है। लेखक पाठकों को अवतारों को पूजा करने की अपेक्षा अविगत अगम, अगोचर, मूल की उपासना करने के लिये बारम्बार उपदेश देता है :

अवधू याही करो विचार।
दस अवतार कहां ते आये, किन रे गढ़े करतार ॥
केहि उपदेस भये तुम जोगी, केहि विधि आतम जारा।
थोथे बांट बांधि के भोंदू येहि विधि जाव न पारा ॥
ऋद्धि सिद्धि में बूडि मरोगे पकड़ो खेवन हारा।
अगल बगल का पैंडा पकड़ा दिन दिन चढ़ता मारा ॥
कहत मलूक सुनो रे भोंदू अविगत मूल विसारा।[4]

---

१. दस अवतार देखि मन भूलो ते सब निरगुन लाया।
जहां ते आये मिले वही मां सागर बूंद समाया ॥
पद संग्रह

२. मलूकदास जी की वानी, १५।६

३. दोहा ११५

४. मलूकदास जी की वानी, १५।६

"दस अवतार कहां तें आये" तथा "दस अवतार देख मत भूलो"[१] आदि लिखने के पश्चात अविगत मूल को न विसारने का उपदेश देना इस बात को प्रकट कर देता है कि लेखक अवतारों की अपेक्षा मूल निर्गुण ब्रह्म की पूजा करना अधिक श्रेयस्कर समझता है।

अचिन्त्य अव्यक्त तथा अलख होने के कारण निर्गुण ब्रह्म तक पहुँचने के हेतु कबीर दास ने ज्ञान मार्ग को अधिक उपयुक्त बताया है। गोस्वामी जी ने उत्तर कांड में ज्ञान को अगम और कठिन बतलाकर सुखद भक्ति मार्ग को उपयोगी माना है।[२] परन्तु मलूकदास इस दृष्टि से भी इन दोनों से भिन्न हैं। उन्होंने निराकार ब्रह्म की उपासना के लिए ज्ञान भक्ति एवं वैराग्य का एकत्व दर्शाया है।[३] इन तीन में से किसी भी पथ पर अग्रसर भक्त ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है।

कबीर के ब्रह्म के समान[४] ही मलूकदास के ब्रह्म भी समस्त शक्तियों से वन्दित है। जीव जड़, चेतन, मानव, सुर, असुर सभी उस ब्रह्म की स्तुति करते हैं। संत, महेश, शारदा, शेष, चौरासी सिद्ध, ऋषि, सन्यासी, सर्वधर्म धारी, दिग्गज, पृथ्वी, अग्नि, वायु, आकाश, चारोधाम, कल्पतरु, कामदेव तथा चौदह भुवन उसका ध्यान तथा वन्दना करते हैं।[५] वह विश्व का रचयिता एवं संहारक है। जगत की रचना और विनाश

---

१. वही, १६।१

२. सुलभ सुखद मारग यह भाई। भगति मोरि पुरान श्रुति गाई॥
खान अगम प्रत्यूह अनेका। साधन कठिन न मन कहुँ टेका॥
रामचरित मानस, उत्तर कांड

३. ज्ञानबोध, प्रथम विश्राम

४. चारि वंद जाके सुमृंत पुराना। नौ व्याकरनां मरम न जाना॥
सेस नाग जाके गरुड़ समाना। चरण कवल कंवला नहि जाना॥
कहै कबीर जाकै भेदै नाही। निज जन बैठे हरि की छांही॥
कबीर ग्रन्थावली, पद ४९

५. जावंह सुमिरहि संत न रेसा। जावंह सुमिरहिं सारद सेसा।
जावंह सुमिरहिं सिद्धि चौरासी। जावंह सुमिरहिं ऋषि सन्यासी॥
जावंह सुमिरहिं सर्व धर्म धारी। जावंह सुमिरहिं दीगज चारी॥
जावंह सुमिरहिं धरनी अकासा। जावंह सुमिरहिं अनल बतासा॥
जावंह सुमिरहि सिद्धि पहारा। ... ... ॥
जावंह सुमिरहिं चारोधामा। जावंह सुमिरहि कल्पतरु कामा॥
भक्ति विवेक।

उसी की इच्छा का फल है। वह अनन्त शक्ति ही जगत का पालन पोषण करती है।[१] वह निराकार होते हुए भी संसार की समस्त वस्तुओं में व्याप्त है। वह सर्वव्यापी है और प्रत्येक घट में उसका निवास है। प्रत्येक घट और मानव के अन्तर्गत ब्रह्म का उसी प्रकार निवास रहता है जिस प्रकार दुग्ध में घृत, तिल में तेल, पुष्प में सुगन्ध, पृथ्वी में पानी, दर्पण में प्रतिबिम्ब वर्तमान रहता है।[२] ब्रह्म और संसार एक दूसरे से किसी प्रकार भी भिन्न नहीं हैं। वह जगत की प्रत्येक वस्तु में निवास करता है। जिस प्रकार आभूषण बन जाने पर भी कंचन ही रहता है उसी प्रकार उसकी सार सत्ता सदैव एक सी बनी रहती है।[3]

उस ब्रह्म की सत्ता का संसार में कोई विरोधी नहीं है। वह सर्व शक्तिमान है। मानव ही नहीं देवगण, पृथ्वी, चन्द्र,नक्षत्र, आकाश, इन्द्र, कमला और ब्रह्मा तक उसकी महत्ता तथा शक्ति से भय खाते हैं। समस्त ब्रह्मांड में केवल एक वही निर्भय है।[४] वह आवश्यकताओं और अभावों से परे है। क्षुधा, निद्रा, जागरण, आवागमन आदि

---

१. सोई जगत पति पालन हारा।
सोई उतपति करत संहारा॥
ज्ञान बोध, पंचम विश्राम।

२. रामनाम दोउ वसै सरीरा। जैसे घृत रहे मध्य छीरा॥
जैसे रहै तिल में तेला। तैसे राम सकल घट खेला॥
जैसे सुमन मा रहै खुम वोई। तैसे राम सकल घट पोई।
जैसे धरती के बिच पानी। तैसे राम सकल घट जानी॥
जैसे दरपन में परछाहीं। तैसे राम सकल घट माहीं॥
भक्ति विवेक

३. जग हरि में हरि है जग माही। कहन सुनन को बहु विधि आही॥
कंचन आदि अन्तहूँ कंचन। भूखन भ्रम मधि हूँ कंचन॥
ज्ञान बोध, पंचम विश्राम

.. मृत्यु डरै ताके डर मारी। धरती मार सकत नहि टारी॥
चंद्र नछत्र डरत अकासा। ... ...॥
इन्द्रा दिक सब उर में रहै। ... ...॥
कमला वपुरी अति डर मानै। भयकरि ब्रह्मा वेद बखानै॥
निर्भय निरंकार प्रभु सोई। ... ...॥
ज्ञान बोध, पंचम विश्राम

अवस्थाओं से वह परे है। वह बिना गति सर्वत्र व्याप्त और विचरता रहता है।[१]

मलूकदास का परब्रह्म नाम, रूप तथा जाति रहित है।[२] वह अकथ अलेख तथा अगोचर है। उसकी शक्ति एवं स्वरूप मानव के अनुमान तथा विचार से भी उच्च तथा विस्तृत है। संसार की अपूर्ण भाषा तथा अल्प बुद्धि मानव उसका पूर्ण वर्णन नहीं कर सकता है। इस प्रकार की धारणा रखते हुये भी मलूकदास ने ब्रह्म को अप्राकृत गुण धारी बताया है। मलूकदास ने परब्रह्म का अकथ, अनीह अज्ञ गुरु, गोविन्द ततसार, प्रभु, ब्रह्म, श्रापति, राम, अन्तरजामी. अविनासी, मंगलरूप, तत्वसार[३], कृष्ण भगवान, नाथ, करुणामय, निराधार जगन्नाथ नारायण, ठाकुर दीन दयाल, साहब, राजाराम, हरि निरंजन, धनी, प्राणनाथ बाजीगर, खुदा, खबटै[६] अलेख, दीनानाथ, अजर अमर[४] पैगम्बर, कादिर करीम, रहमान, अजरत, काजो, सिरजनहार, सांई, अगोचर दीनबन्धु, पुरुषोत्तम भक्त वत्सल, गुन सागर कला, निधान[५] आदि नामों से सम्बोधित किया है। ये नाम बार बार कवि की रचनाओं रतनखान, बारहखड़ी, ज्ञान-बोध, भक्तवच्छावली, ज्ञान परोछि सुखसागर आदि ग्रंथों में उपलब्ध होते हैं।

परब्रह्म के इन उपर्युक्त विभिन्न नामों में से निरंजन, राम, अविगत, अभय, अगोचर आदि का कवि ने अधिक प्रयोग किया है। इनमें से अविगत अगम, अगोचर, अन्तर्यामी, अलेख आदि कुछ नाम परब्रह्म के प्रमुख लक्षणों के द्योतक हैं। दीनानाथ, दीनदयाल, धनी, गुनसागर, आदि नाम परब्रह्म के गुणों को प्रकाशित करते हैं। मलूक

---

१. हमरे गुरु की अद्भुत लीला न कछु खाय न पीवै।
ना वह सोवै ना वह जागै ना वह मरै न जीवै॥
बिन पावन उडि जाय अकासे बिन पंखन उड़ि आवै॥
बिन पायन सब जग फिरि आवैं सो मेंरा गुरु भाई॥
मलूकदास की बानी. पृष्ठ १.२

२. अवधू का कहि तोहि बखानो।
(क) गगन मंडल में अनहर बोलै जाति वरन नहि जानो।
अहो अहो मै कहा कहों तोहि नांव न जानो देवा॥
तथा (ख) अवधू ताकर नाव न जानो।
ताकर जाति भेद ना वरना उतपति नास न तामे आनो॥

३. रतन खान में

४. बारहखंडी

५. भक्तवच्छावली में

६. मलूकदास जी की बानी में

दास ने परब्रह्म को रहमान, रहीम, करीम खुदा, हजरत, कादिर, तथा काजी आदि नामों से भी संबोधित किया है। इन नामों का प्रयोग कवि ने हिन्दू एवं मुसलमानों के हृदय में परब्रह्म का एकत्व स्थापित करने के लिये किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि उन्होंने आचार्य वल्लभ की तरह उसे विभिन्न धर्मत्व के धारण करने वाला कहा है।

ब्रह्म का स्मरण और जप करने के लिये मलूकदास ने अलेख को उक्त नामों से सम्बोधित किया है। उन्होंने अपने सम्प्रदाय के अन्तर्गत ब्रह्म के नामों को ही परमात्मा का प्रतीक माना है। मलूकदासी सम्प्रदाय में नाम का बड़ा महत्व माना गया है। भवसागर को पार करने के लिये राम के नाम का वही महत्व है जो सागर पार करने के लिये पोत अथवा जलयान का होता है।

मलूक के शब्दों में राम नाम यद्यपि देखने में अत्यन्त लघु है पर उसका प्रभाव तथा महत्व महा है। छोटा होते हुये भी राम नाम मानव पापों के कोटिशः पर्वतों को नष्ट कर देता है।[1] राम नाम रूपी औषधि संकट रूपी सभी व्याधियों का विनाशक है। राम नाम भवसागर की सभी व्याधियों के लिये महाऔषधि है।[2] इस विनाश शील संसार में राम नाम ही सार तत्व है।[3] और इसी के स्मरण मात्र से योग तथ्य यज्ञादिक सिद्ध हो जाते हैं।[4]

गोस्वामी तुलसीदास की भांति मलूकदास राम नाम के बड़े समर्थक हैं। गोस्वामी जी के शब्दों में केवल वही माता पुत्रवती है जिसका पुत्र राम का भक्त हो।[5] मलूकदास के अनुसार भी वह पुत्र सुपूत है जो राम का भक्त हो और वही माता सुन्दरी

---

१. राम नाम एकै रती, पाप के कोटि पहाड़।
ऐसी महिमा नाम की जमि करै सब छार॥
मलूकदास जी की वानी, पृ० ३३

२. राम नाम औषध करो हिरदै राखो याद।
संकठ में लौ लाइये दूर करै सब व्याध॥
वही, पृ० ३३

३. राम नाम ततसार है हित सो सुमिरै सोई।
ज्ञान बोध॥

४. राम नाम सुमिरत सदा जोग जग्य सिद्धि होई।
रतनखान

५. युवती पुत्रवती जग सोई। रघुवर भक्त जासु सुत होई॥

है जिसका पुत्र राम नाम से प्रेम रखता हो।[१] राम नाम सर्वशक्तिमान है। राम नाम का उच्चारण करता हुआ दरिद्र साधु देवेन्द्र को भी तुच्छ समझता है।[२]

राम नाम का बड़ा व्यापक तथा गम्भीर प्रभाव है। राम नाम के उच्चारण से मानव का शरीर, हृदय, आकाश सभी ज्ञान के प्रकाश से उसी प्रकार प्रकाशमान हो जाता है जिस प्रकार आकाश में स्थित सूर्य के प्रकाश से संसार आलोकित हो जाता है।[३] राम नाम के स्मरण मात्र से सभी भेद भाव नष्ट हो जाते हैं और सांसारिक वस्तुयें निःसार प्रतीत होने लगती हैं।[४]

राम नाम का प्रताप बहुत महान है। सुर, नर, मुनि, सनतकुमार, आदि नाम के प्रभाव से ही महत्वपूर्ण बन गये। वेश्या के पुत्र वशिष्ठ नाम के प्रभाव से ही पवित्र हो गये। नाम के प्रभाव से ही अत्यन्त हीन कागभुशुन्डि कुलीन तथा बटमार वाल्मीक ऋषि हो गये। नाम के प्रताप से हनुमान और अंगद आदि वानर हरि के भक्त हो गए और रावण का भ्राता असुर विभीषण अत्यन्त पूज्य तथा पवित्र बन गया। शवरी निषाद, व्याध, अजामिल, ग्रह, गणिका, गृद्ध, मतंग, आदि कुलीन और पूज्य केवल नाम के प्रभाव से बन गये। नाम के प्रभाव से बिदुर तथा नीच दासी कुब्जा मांगलिक और सुपच डोम तथा रविदास चमार अधिकारी बन गये। नामदेव, कबीरदास, धरमदास खटिक, सैन नाई, माधो तम्बोली, दादू, सदन कसाई, आदि नाम के प्रभाव तथा

---

१. सोई पूत सपूत है जाहि नाम सो हेत ॥
तथा, राम नाम जिन जानियां तेई बड़े सपूत।
एक राम के नाम विन कागा फिरै कपूत ॥
मलूकदास की वानी पृ० ३५
तथा, मलुका सोमाता सुन्दरी जहां भक्त औतार।
मलूकदास की वानी, पृ० ३५

२. गाढी सत्त कुपीन में सदा फिरै निःसंक।
नाम अमल माता रहै गिनै इन्द्र को रंक ॥
वही, पृ० ३३

३. रवि जिमि बसे अकास जोति परे बाकी भुवन में।
तैसे नाम प्रकास अंदर बाहर सुन्न में ॥
भक्ति विवेक।

४. सकल वसु के भेद मिटाना। कंचन कांचु भे एक समाना ॥
भक्ति विवेक

प्रताप से परमपद को प्राप्त हुये ।[1] राम नाम का महत्व वर्णनातीत है। शिव ब्रह्मा तथा सनकादि भी राम नाम की महिमा का गान नहीं कर सकते हैं ।[2]

नाम महिमा का वर्णन प्रायः सभी भक्त कवियों ने किया है। कबीर[3] तुलसी[4], दरिया द्वे[5], दूलन दास[6], सहजो बाई[7] गरीबदास[8] तथा पलटू साहिब[9] आदि ने राम नाम का महत्व बहुत ही सविस्तार वर्णन किया है और मलूकदास ने भी उसी परम्परा का पालन किया है।

---

१. सुर नर मुनि जन सनत कुमारा । नाम प्रताप लषै उजियारा ॥
मुनि वसिष्ठ विसवा के पूता । ... ... ते भयौ पुनीता ॥
काग भसुन्डि महा होना । नाम प्रताप भयो कुलीना ॥
वालमीक रह ठक बटपारा । ... ... ते भयो पद सारा ॥
हनीवंत अगद कथि के देही । ... ... हरि परम सनेही ॥
असुर विभीषन भ्राता रावन । ... ... भयो बहु पावन ॥
भिल्लिनि सवरी मल्लाह निषादा । नाम प्रताप किये पद सारा ॥
विदुर दास सुत कुबजो कुदासी । ... ... ते मंगल रासी ॥
सुपत्र डोम रविदास चमारा । ... ... भयो अधिकारा ॥
नामदेव कबीर जोलाहा । नाम प्रताप परम पद लाहा ॥
धरम खटिक अरु सेना नाई । ... ... हरि दीन बड़ाई ॥
दादू पुनि और सदन कसाई । ... ... ते भली गति पाई ।
भक्ति विवेक ॥

२. राम नाम की हरि भक्ति न के आदि ।
वरनत पारन पावहि शिव विरंचि सनकादि ॥
भक्ति विवेक ॥

३. संतवानी संग्रह, भाग १, पृ० ४.६
४. वही, पृ० ७०.७१
५. वही, पृ० १२१. १२२
(ख) वही, पृ० १२७
६. वही, पृ० १३४.१३६
७. वही, पृ० १५५.१५६
८. वही, पृ० १८४.१८६
९. वही, पृ० २१४

मलूक-परिचयी

(रचयिता—सथुरादास)

★

प्रतिलिपिकार :

महंत नानक चंद

मलूक-परिचयी

नमो नमो गुरु चरनन, नमो पुरुष कर्तार।
जुग जुग धारो जीव हित, संत रूप अवतार॥

श्री गुर चरनन को सिर नाऊँ, हर्षवंति होइ मंगल गाऊँ।
आदि पुरुष यह कीन्ह विचारा, महा दुखित जीव संसारा।
जुग जुग संत जाहिं धरि देहाँ, ताते जीव लहै पद नेहां।
नामदेव कबीर रैदासा, जाते जीव लहै विश्वासा।
एहि विध साधु अनेकन भये, बहु तक जीव मुक्त होइ गये।
अब एक अंस जाइ संसारा, पावै जीव मोक्ष का द्वारा।
मारग सीत (सत्य) लोक का रहा, तब कर्तव्य विचार यह कहा।
हंस रूप अंस एक जावै, सो जीवन उद्धार करावै।
एक पुरुष को आज्ञा दीन्हा, तब तिन जगत पयाना कीन्हा।
कड़े माहिं खत्री के गेहा, प्रगटे भक्त आइ धरि देहा।

वैशाष बदी तिथि पंचमी, संवत सोरह सै एकतीस।
जगत गुरू प्रगट भये, मलूक पुरूष जगदीस॥

मात पिता सुकृत अधिकारी, तेहि कुल उपजे मंगल कारी।
वेद विहित करि नाम धराये, कुल को धर्म सबै करवाये।

नाम मलूक धरो तब ताको, रासि वर्ग गनि ब्राह्मण भाषो।
यह तो अंस भागवत होई, कुल को सकल उद्धारे सोई।
जेउ जेउ बालक होइ सयाना, तेउ तेउ लच्छन भगत निधाना।
दया धर्म मन में अधिकाई, राम भजन सुमिरन चित लाई।
दुखी जीव पर करुणा करेहीं, घर से चोरी कर तिन्ह देहीं।
अन्न वस्त्र जो गृह में पावें, नंगे भूखे आनि पवावहिं।
मात पिता कहैं यह बालक, उपजो आई करै घर घालक।
दोनो मिल यह मत ठहराई, अब यह को कुछ राह लगाई।
बनिज कामरा को घर हाई, कछुक दई बेचन का सोई।
कछु बेंचो कछु नागेन दीन्हीं, सत संग मिलि भगतहि कीन्ही।
बीरा ते सब कहैं बालकहि, जप सो करता पुरुष पालकहिं।
बारह वर्ष ऐसेहीं बीते, आतम चीन्हें आपा जीते।
राति दिवस मन सुमिरन करही, संतन हल हृदय में धरिहीं।

जन के पर उपकार सो, घर ते लेहिं निकास।
सेवा करहिं साधु की, निस दिन यही विलास॥

जो कुछ साधू सिक्षा देहीं, सो मलूक हृदये धरि लेहीं।
निति उठि हाट बजारहिं जाहीं, बेचहिं कमरी जौन बिकाहीं।
एक दिन माल बिकानो भलो, मोट उठाइ घरहिं को चला।
बैरागी दस बीसहिं आगे, भूखे बहुत कछु एक नागे।
पूंछो भगत मलूका तुमहीं, कहेउ दास हम तुम्हरे अहहीं।
तब तिन कही एतो जसलेहू, हम भूखे कछु भोजन देहू।
तबै कही बैठो वहि ठाऊँ, देहिं राम सो तुम पै लाऊँ।
यह कहि कै आये घर मांहीं, कछु ढूढ़न को भीतर जाहीं।
कोठी नाज धरो जहँ माता, ताको जाय लगायो हाँथा।
बांधी मोट काहू नहि जानी, सो साधुन के आगे आनी।
करी रसोंई भोग लगाए, त्रिपित भए राम गुन गाये।
एक दिन माता गई तह्वाँ, कोठी नाज धरायो जह्वाँ।
जो देखैं तो कोठो खाली, 'खड़ी रिसानी पाछे चली।
कोठी देखि भयो मन सोचा, दास मलूकहिं लावैं दोसा।
तबहिं राम एक कला देखाई, खाली कोठी फेरि भराई।
देखि मातु मन संका आई, अचरज लखि काहू न जनाई।
बारह वर्ष का पूरा नाहीं, यह चरित्र है बालक माहीं।

लरिका नहीं कोऊ औतारा, यह माता मन माहिं बिचारा।
उठै बिहान बंदना करै, जो माँगे सो आगे धरै।
खाली बासन जो घर धरै, माता जाय देखै सब भरै।
बड़े भाग पुत्र यह आये, पुन्य पुरातन से हम पाय।
हमसा भाग्यवान नहिं कोई, ऐसा पुत्र प्रगट जहँ होई।
तापाछे कियो विवाह .बिचारी, कीन्ही रीति सकुल त्योहारी।
ब्याहि बहू आनी घर मांहीं, तासो भगत न नेह कराहीं।
माता विनय करैं पग धरहीं, संतत काज विनै बहु करहीं।
बीते काल पुत्री एक भयी, पुत्री सहित सोउ मर गयी।
मात पिता सों कहा बुलाई, भये वैस्नो होई भलाई।
जिय विस्वास दुहूँ मिल आने, भये वैस्नो मन ना संकाने।
बहुर दुहूँ मिल मत ठहरायो, पूंजी दीन्हीं बनिज करायो।
सिख दई बेटा बेचो कमरी, पैदा करके जोरहु दमरी।
पैदा करि खरचो सब मांहीं, हम तुम ते कछु चाहैं नाहीं।

पैदा करिकै खर्चिये, पूंजी राखै मान।
नाही पूंजी घटे जग, बनिये न सनमान॥

लीन्हो दास बनिज मन धारो, बचन मान तब उद्यम् कारो।
ताकी कमरी दाश विसाही; नित उठि हाटहिं बेचन जाहीं।
बेचहिं खरिचैं साधुन माहीं, मातु पिता की संका नाहीं।
करहिं महोछा जोरहिं संता, मन निष्काम भजहि भगवन्ता।
अंतर उपजी नौधा भक्ती, कबहुँ उदास कबहुँ आसक्ती।
करहिं सदा पद अस्तुति रामा, हरि भज करैं सभन को कामा।
सुन्दरदास पिता को नाम, कालहिं पाइ गये हरि धाम।
क्रिया कर्म सबही विधि कीन्ही, भगतहि सबन सिखावन दीन्हीं।
उद्यम करि पालिये कुटुम्बा, तुम्हरी बड़ी मातु यह अंबा।
सीख दई सब घरहिं सिधाये, दास मलूक चरन चित लाये।
दशा प्रेम लच्छन यह आई, कबहुँ अनंद कबहुँ बिकलाई।
काँटा कांकर मग में होई, चले जात अलगावहिं सोई।
देखि देखि सब अचरज मानै, भया दिवाना यो सब जानै।
साखी पद जो आपु बनावहिं, लोग दिवाना का कहि गावहिं।
सावधान रहै बहु भाँती, लोग कहै इन्ह छोड़ी भ्राती।
बेचहिं कमरी संतन पोषैं, बहु विध बन्धु कुटुम्ब संतोषैं।

कछु दिन गए उठी मन माहीं, स्रुति मरजाद गुर हमरे नाहीं।
आपहिं आप कियो उपचारा, चेला गुरु आप करतारा।
दक्षिण देश द्राविड़ के गाऊं, श्री बल्लभ प्रगटे तेहि ठाऊं।
ताको हरि जी आज्ञा दीन्हीं, गोकुल आइ थापना कीन्हीं।
ताके विट्ठल नाथ महंता, जेनकी साख प्रगट भगवंता।
तेनके भावनाथ अधिकारी, देवनाथ तेनतें सुखकारी।
ताके परषोतम सब जानै, रामानुज सम्प्रदाय मानैं।
ठाकुर को आज्ञा ते चले, कड़े माहिं मलूक सो मिले।
तब मलूक अपने घर लाय, दिक्षा लै उत्साह कराये।

निर्भय भक्ति दृढ़ानी, खेलत खेल निरास।
निसु दिन सेवा साधु की, भार्षे सथुरादास॥

कछु एक उद्यमहू मन धरहीं, उपजै कछू महोछा करहीं।
एक दिन भगत पैंठहू गये, चले बेचि मोटि सिर लये।
आवत घरहिं लोट गरुवानी, अंतरजामीं तबहीं जानी।
होइ मजूर आगे चलि जाहीं, तासो भक्त मोट उतराहीं।
आतम दृष्टि कहो कर जोरी, भैया कहा मजूरी तोरी।
मोट हमारी घर लै चलो, जो माँगहु सो दैहों भलो।
तब मजूर हँसि बचन सुनायो, टका आपनो मोल बतायो।
कही अधिक दैहों एक दमरी, लई मोट सिर ऊपर कमरी।
मोट लई मजूर घर चाला, चलत अदृष्टि भयो तेहि काला।
छिन एक ताको पंथ निहारा, बहुरि भक्ति मन माँहि संभारा।
मनि आनन्द मनहिं में लीन्हा, हरि बंधन से दूरहि कीन्हा।
अब मेरी पचि मरै बलाई, झूठे जग सों को लपटाई।
गावत पद आनंद समाना, मोटरी लै हरि घरहिं तुलाना।
आनि बरोठे मोट उतारी, तब हरि मात लिये हंकारी।
माता कहैं कहाँ ते लायो, कांधे सिर धरि मोट पठायो।
दया करी[1] बोले बनवारी, दास मलूकै दियो बिचारी।
टका मजूरी मेरी कीन्हीं, साधू जानि मानि मैं लीन्हीं।
टका मजूरी मेरी दीजै, माता विदा हमारो कीजै।
तब मात यह मत मन गहा, दास मलूका पाछे रहा।

---

१. रमतराम—पाठान्तर

अंतरयामी बूझी बाता, मोट लेहु मति सोचहु माता।
माता कही छिन बैठो पूता, घामे आये थके बहूता।
बैठ खाइये रूखा टूका, जब लगि आवै दास मलूका।
तब माता एक रोटी लाई, बैठि एकांत प्रीत सों खाई।
ग्रास एक छोड़े तेहि ठाई, भगत आपने की सुध आई।
दृष्टि ओट मजूर जब भयो, तब घर दास मलूका गयो।
पहुँचत घर माता उठ बोली, दास मलूक तेरी मत डोली।
मजूर भरोसे माल पठायो, राम दया ते सो घर आयो।
मैं मजूर राखो बैठारी, अपना मोटरा लेहु संभारी।
सुनत मजूर चरन गहि पड़े, धन्य मात तैं दरसन करे।
माता कहाँ मजूर है बैठो, दिग्यो बताय भक्त तहँ पैठो।
देखा तहाँ ग्रास तिन पायो, सो प्रसाद मलूक तब खायो।
खातहि चमत्कार भयो औरै, निश्चय कर बैठे तेहि ठौरै।
हठ कीन्हों हरि सो लौ लायो, दया करी प्रभु दरस दिखायो।
तबै मलूक चरन गहि परे, परम पुरुष कर माथे धरे।
दास मलूक बीनती लाई, अब मोहि जग की लगे न बाई।
जो प्रभु जी तुम किप्रा करी, सर्व रूप दरसो नर हरी।
भक्त कही सो मानी राम, तब ते अधिक भये निष्काम।

दरसन भये पट खुलो, सहज भयो चिश्वास[1]।
घट घट पर्चै प्रगटो, गावै सुथुरादास॥

प्रभु निष्काम कियो करि मोषा, मिटि गै जन्म जन्म के दोषा।
चहुँ दिश भयो नाम प्रकाशा, दुखित जीव की पुर्वै आसा।
अनभै भक्ति दसा विस्तारी, सब बिध पूरा करै मुरारी।
बहुतै शिष्य होई संसारा, पलटे दशा होई भौ पारा।
जो कोइ जीव सरन तकि आवै, ताको आवागवन मिटावै।
जो कोइ शिष्य होई मन जानी, ताको भेटै सारंग पानी।
जो कोइ पास परोसे रहैं, औ यक कोई बात न कहैं।
जो कोइ माला तिलक बनावै, ताके बंधन सकल मिटावैं।
जो कोइ दरसन सहजै करै, ताको पाप सकल हर परै।
जो कोइ राखै उनते रोषा, तेनको लागै कोटिक दोषा।

---

१. परगास—पाठान्तर

जिन पर दृष्टि कृपा को करैं, ताको महिमा कहि ना परै ।
जब ते दरसन राम दिखायो, तब ते परिचय सबहिन पायो ।
साधु अनेकन दरसन आवैं, भाव भक्ति अति देख अघावैं ।
कछु दिन बीते मातु समानी, अधिक प्रीत गोविंद से ठानी ।
मात पिता दोऊ मर गये, आतम ब्रह्म रूप सो भये ।
ब्राह्मण भाट परोसी जेते, लेहिं रोज भूखे सब तेते ।
देश देश के यात्री आवैं, शिष्य होई अरु भेंट चढ़ावैं ।
हिन्दू मुसलमान जे कोई, आरति जो पावै सो सोई ।
भूखे पशु जो कूकुर आवै, दयावंत ताहू अघवावैं ।
हिन्दू तुरुक बोधवा जेती, छाजन भोजन पावैं तेती ।
परदेसी काहूँ ते आवै, भोजन लै पुन खर्ची पावै ।
रोगी दोखी होइ जो कोई, ताहू को उपकारज होई ।
काहू की आशा जिय नाहीं, हरि बिढ़वै जन खरिचै खांहीं ।
दिन दिन हरि सो बाढ़ै हेता, कोई चेत कोई कहै अचेता ।
दया लागि मगि कांकर टारहिं, कबहुँ क मंदिर आप बुहारहिं ।
मारग जहाँ लोग दुख पावै, लाइ मजूर आप बनवावै ।
पर काज को बड़े समर्था, हरि सो लीन न चाहैं अर्था ।
बहुरि राम ने कला बताई, अपने जन को दई बड़ाई ।
ख्वाजे कड़क पीर एक रहते, मुसलमान बड़ाई करते ।
सब पीरन मो महिमा जाकी, किताब कुरान बड़ाई ताकी ।
मासु खाहि मद पानहि करे, कहू की संका नहिं धरै ।
ऊँची करामाती सब जानैं, और न कोई पीर समानै ।
जहं तहं फिरै पान मद करै, हांथ सुराही प्याला धरै ।
एक दिना झुक पड़े बजारा, दशा देह ना सके संभारा ।
मदिरा बरतन करते छूठा, गिरी सुराही प्याला फूटा ।
भयो क्रोध तहवां पग मारा, बहुत अगाध बहो पनारा ।
सब मिल बांधै नहीं जोराई, कहै सराप पीर की अहही ।
हाकिम औ चौधरी बधायो, फिर[1] से फूटै ग्रहे ढहायो ।
लोग पुरातन कहैं बिचारी, ख्वाजे कड़क लात यह मारी ।
दिन दिन बाढ़ै जल के बहतें, पहुँचा जहाँ मलूका रहते ।
दास मलूका के मन आई, चल नारा बधवइये भाई ।

---

१. वर—पाठान्तर ।

दास मलूका गये तहाँ, नार बंधावन हेतु।
अपने हांथ पषान बहु, डारि दिये करि नेत ॥
बहुत मजूर लगाई तंह दीन्हा, खरी मजूरी तिनको कीन्हा।
जितने ईंट पषान लै आवैं, तेतने टका मजूरी पावैं।
कोट पुराना सहर पुराना, जहं तहं पड़े ईंट पाषाना।
बहुत मोल दै चूना आने, नारे माँहि डारि कै साने।
पत्थर ईंट आन तिहि डारे, लालच से मजदूर न हारे।
तुरुक कहैं मलूक सो आई, यह नारा बाँधा नहिं जाई।
खबाजे कड़क लात यह मारी, बहुत बंधाय रहे पचि हारी।
कही मलूक वै पीर कहावैं, उनते कोई दुख न पावै।
तिनहीं हमसे कही सुनाई, तुम पै मत दुःख पावो भाई।
जेड़ जेड़ नारा बांधत जाहीं, बहुतक दुख पावैं मन माहीं।
तिन पुकार हाकिम सो कीन्हा, सबै कहा मलूक दुख दीन्हा।
हाकिम पूछा का दुख दीन्हा, सांच कहो फरियाद जो कीन्हा।
गोर मस्जिद के पत्थर लेई, नारे माहिं गोर सो देई।
तेहिते हम सबही दुख पावा, ताते पास तुम्हारे आवा।
सबन कही वह राह बनावै, जाते सब कोई दुख पावै।
हाकिम कही सुनो रे भाई, नाही कोई फकीर सताई।
कैसे मुसलमान तुम अहहू, करत बन्दगी भलो न कबहू।
नारा मलूक आप बंधवावै, नेकी करत दोष को लावै।
ऐसे बहु विधि करहिं उपाधी, लगै न काहू की फरियादी।
मलूक के नाहीं अहंकारा, जहाँ तहाँ करते रखवारा।
बेगि बंधायो नारा सोई, तंह बस लोग सुखी सब होई।
तब ते कला अधिक औ बाढ़ी, दुनियाँ रहै दरस को ठाढ़ी।
उन्हें पीर ने सपना दीन्हा, मलूक बराबरी क्यों तूम कीन्हा।
दोस्त एक रंग आलम के प्यारे, इतते अल्लाह रहै न न्यारे।
उनके कदम तले जा परो, बुरा आपना मत करो।
उठ बिहान सब पायन परे, दिये प्रसाद माथे कर धरे।
सब पर दया एक सो होई, नंगा भूखा रहे न कोई।
काहू को घर देइ उठाई, काहू को छावनी छवाई।
जथा शक्ति सब कोई पावै, द्वारें ते भूखा नहिं जावै।
आज्ञाकारी हाकिम आवै, बेमुख होई रहन न पावै।

होतई वस्त्र तेहि देही, पर उपकार करहिं जस लेही ।
बहुत दुखिन की कन्या ब्याहैं, भक्ति करै औ हरि गुन गावैं ।
कबहुँ मारत चोर छोड़ावै, दुखी देख आपुनि उठि धावैं ।
द्वारे आगे बसै बयारा, पान मिठाई सकल पसारा ।
जाती सो किसाहि मन माहीं, देहिं लुटाई को बालक खाही ।
कथा निरंतर सुमिरन होई, निकट महन्त रहे सब कोई ।
भाँति रासि करवावैं, करै विहार साधु सुख पावैं ।
मकर नहान के आवै कोई, आवत जात कड़े सुख होई ।
इत उत हरिजन आवहिं जाहीं, पहुँची बात देसांतर माहीं ।
काहू जन मुरारि सो जाई, जन मलूक की करी बड़ाई ।
कलि गोरख मुरारि अधिकारी, जिनके संग सदा बनवारी ।
सुनत विचारि कियो मन माहीं, काऊ जन प्रगटो कलि माहीं ।
दरसन को मन माहि बिचारा, चले तुरत न लायो बारा ।
निर्गुन आपु अतीत महन्ता, संग अतीत सात सौ संता ।
उतिरे आन बाहिरे गाऊँ, आसन कर बैठे तेहि ठाऊँ ।
बैठि तहाँ सब मिलकरी, घिउ खिचरी को आश ।
दास मलूका सोंइ करी, भाषै सुथरादास ॥
ब्रह्म रूप मुरारि जी स्वामी, दास मलूका अंतरयामी ।
करि समाज मिलवे को चले, लखि मुरारि आगे होइ मिले ।
भेटि अंक भर दरसन पाये, दास मलूक द्वार ले आये ।
बीस सेर खिचरी तब कोन्ही, घीव दही टके का लीन्हो ।
पंगत बैठी नौ सौ संता, पार सों आप करे भगवन्ता ।
खट रस व्यंजन पावै स्वाद, देखै खिचरी ऊपर आद ।
भयो प्रसाद कियो, सनमाना, इच्छा भर खाये मनमाना ।
संत खुलासे भरि भरि पायो, त्रिति भये सभ ही मन भायो ।
सावधान होय बैठे संता, गुन गावै मलूक भगवंता ।
सुनत मुरारि प्रेम रस भीने, आतम दरस मलूक का चीन्हे ।
हृदय मुरारि वंदना करे, प्रगट मलूक चरन लै परे ।
रीझे तब मुरारि मन स्वामी, दास मलूका अन्तरयामी ।
कही मुरारि मलूक अवतारा, जीव के हित प्रगटे संसारा ।
कलयुग भक्त निशान बचाओ, सब जीवन की सांक मिटाओ ।
कलयुग चौकी तुम्हरी भई, संत जीवन्ह को सूझी दई ।

चरचा ग्यान दुहँ मिली दीन्हा, सबही संत भक्त को चीन्हा।
अलखराम सों कह्यो मुरारी, मलूका रूप आप बनवारी।
एहि विध रहि कछु दिन सुख पायो, मकर मास को मेला आयो।
तब मुरारी जी आज्ञा लाई, सुरति त्रिवेनी की तब आई।
पहुँचि प्रयाग नहाये जबहीं, अखाड़ा करि के बैठे तबहीं।
धरै ध्यान करै स्नाना, बहु विधि होई साधु सनमाना।
एक दिना प्रभु ऐसी भई, मुरारि रसोई नाहीं भई।
सुरति करी मलूक तब जाना, रहे मुरारि योग बिनु पाना।
थैली माँहि द्रव्य तब धरेहो, आपुहि लै गंगा को चले।
गंगा से विनती करी भारी, करते थैली जल में डारी।
मातु साधु तुम्हरे हे अंसा, वेगि देहु जनि होवै संसा।
रुपया सत सो दीन पठाई, रात मुरारि न रोटी खाई।
भोर मुरारि नहान जब आये, थैलो माँहि द्रव्य तिन्ह आये।
देखि द्रव्य विचरि मन कीन्हा, आज्ञा भई मलूकै दीन्हा।
कहि मुरारि भोजन बनवाये, गंगा हाँथ मलूक पठाये।
प्रगट बात यह कही मुरारी, चर्चा भई संत मह सारी।
प्रभु जो जन को बोझ उठायो, दई भेंट गंगा कर आयो।
अचरज एक दिन ऐसा भयो, कुछ सामान[1] चोर लै गयो।
सुनत मलूक दिवानहि गये, देखि सभै उठि ठाढ़े भये।
हाकिम कही कहां प्रभु आये, आज्ञा होती सो कहि न पठाये।
कहो मलूक चोर यह छोड़ौ, या कारण तुम ते कर बोड़ौ।
ताहि छुड़ाई और दीन्हो भेटा, जियो छुड़ाये बहुत सकेटा।
साधुन को चरणामृत दीन्हा, भाल तिलक भक्त तेहि कीन्हा।
कहा जाइ तीरथ कर भाई, साधुन्ह की सेवा अधिकाई।
भये कृतार्थ निर्मल चोरा, चित धरि गयो देसांतर ओरा।
भयो चोर ते ब्रह्म महन्ता, ताके संग अनेकन संता।
ऐसे अधम परम पद पावें, जाके राम साधु कर लावें।

चोर चपल चंडाल जे, साधु सरन में जाय।
जाके सिर पर कर धरै, ब्रह्म रूप दरसाय॥

बनषंडी एक नाम नरायन, बड़े भक्त औ विष्णु परायण।
तिन्ह मलूक सो प्रश्न विचारी, बहुत भाँति कीन्ही मनुहारी।

---

१. सुरादेन—पाठान्तर

स्वामी दयावंत होइ कहिये, पूछत मोहि छोभ ना लहिये।
स्वामी कहौ बचन परवाना, मै पूछों अपने अहकाना।
सबै कहै हरि ढोई मोटा, सच कहौ जन राखौ ओटा।
कैसी भई सो मोसो कहो, कैसे मिले सो कैसो रहो।
सुनहु साधु हम तुम हैं जैसे, अरु हरि जहं देखै तहं जैसे।
मारग जात भार गरुवाना, तब मजूर होइ आन तुलाना।
टका आपनो मोल बतायो, लीन्ही बोझ घरहि पहुँचायो।
याको काह अचम्भा भाई, अबकी ढोवत होइ सहाई।
कबीर के घरवर दीढ़ायो, रैदासहु को परिचय लायो।
नामदेव हित जहँ तहँ धायो, धना पात को खेत जनायो।
सेन रूप नृप मर्दन करेयो, मीराबाई को विष हरेयो।
तीलोचन के विर्ति कमाई, माधोदास के भये सहाई।
अपने पन पर रहत सहायक, अचरज काह साधु सुखदायक।

अन्तरव्यापी रामजी, बाहर सतगुर रूप।
सब साधुन्ह के कारने, पूरन ब्रह्म सरूप॥

वनषंडी हंसि पायन पड़े, दास मलूक माथ कर धरै।
महाराज हम सरन तुम्हारी, सतगुर पूजो आश हमारी।
पुनि मलूक मन ऐसो आई, कछु दिन रामत करिये जाई।
और विचार विचारो ऐसो, जहाँ तहाँ सब साधू जैसो।
उन्ह साधुन को दरसन लीजै, पृथ्वी को परयाटन कीजै।
ऐसो उपजी मन में लोचा, जगन्नाथ का मारग सोचा।
यह ठहराव मनहि में कीन्हा, काहू को लखहू नहिं दीन्हा।
आधो राति सुन की बेला, दास मलूक निरन्तर खेला।
चारों दिश की सुरत बिचारी, तिमिर मेट कीन्ही उजियारी।
दास आपने सवास बसाये, सकट लै सब भक्ती लाये।
जगन्नाथ को दरशन भये, परषोत्तम क्षेत्र बलि गये।
मिलि साधुन्ह को दरसनलीन्हीं, जहँ जहँ रहेन काहू चीन्ही।
जगन्नाथ सतगुर अवतार, तनते मिल सब धर्म सुधार।
उनचास कोट वसुधाफिरआये, जगन्नाथ को गाथा गाये।
उनकी आज्ञा ऐसी भई, रोम रोम दया निर्मई।
मलूक आप्रने आसत जाहू, कछु दिन सुखी करहुँ सब काहू।
तुमसे हम नहिं छिन नियारे, जहाँ तहां घर वन रखवारे।

आज्ञा दै के फेरि पठाये, बात मान तब घरहि सिधाये।
जबने आसन तजि कै गए, बहुतै दुखी लोग सब भये।
जैसो दुख गोपिन्ह को सुनौ, तैसो शिष सेवक को बनो।
शृंगार चद लघु भ्राता एका, उपजा ताके ज्ञान विवेका।
समाधान सब दिन को कीन्हा, बहु विध सेवा कर वे लीन्हा।
दूनी सेवा साधु की करै, जो कछु माँगै आगे धरै।
एहि विधि मास पाँच चलि गये, तब शृंगार दुखी अति भये।
बहु वियोग को बरनै पारा, तब मलूकजी मिलन विचारा।
कोस पाँच पै बैठे आई, प्रगट बये सबहिन सुखदाई।
पाँच कोस काया ये जानो, ताही को वेदान्त बखानो।
चले मलूक नाव चढ़ि आपू, उठि धाए सब कियो मिलापू।
घर में आन पहुँचे जबही, व्याउ आरती कीन्हीं तबही।
जिन उन जैसी प्रीत लगाई, तिनको तैसो भजो सहाई।
पिछले दुख प्रभु सकल मिटाये, होइ प्रसन्न सबको त्रिपताये।
छठे मास कड़े में आये, शिष्य यात्री घर ते धाए।
दिन दिन बाढ़ै कला घनेरो, माया भयी रहै नित चेरी।
मोक्ष धर्म काम औ अर्था, देवे को अति बड़े समर्था।
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, चारो वर्ण माहि लै शिक्षण।

अविगत महिमा साधु की, राम भजहि जे नित।
गुर गोविन्द सहाय जेहि, बसहिं कृष्ण ते चित॥

और कथा एक सुनहु रिसाला, भगत सुभाउ प्रेम प्रतिपाला।
कायथ एक प्रयाग को वासी, सब गुण हीन कुपंथ नेवासी।
पर मन को लोलुप और कामी, वित उनमात विषै रस गामी।
आपुन अधम जान पछितावै, चरन ध्यान चाहे नित ध्यावै।
जेंउ जेंउ नहीं ध्यान ठहरावै, तेंउ तेंउ अति डरपै दुख पावै।
सो सुनि धायो संतन्ह साथा, दर्शन कियो चरन धरि माथा।
हाथ जोर कीन्ही मनुहारी, गुरु मलूक मैं शरण तुम्हारी।
महाराज मोहि दीक्षा दीजै, बाँह पकरि आपन कर लीजै।
कंठी माला तिलक मंगावा, भद्र कराइ ताहि पहिनावा।
भये दयाल नाम कहि दीन्हा, अंतरगतितेहि सीतल कीन्हा।
कछुक कामना पुरई ताकी, बकसी चूक हती जो बाकी।
गही लाय अपने जन केरी, दई पावरी निज जन हेरी।

अन्तरयामी मलूक जी, देते हैं भरपूर।
ठहरे पावै तत्त्व को, गये सो चकनाचूर ॥
जे ठहरे तिनका सुनो नाम, छूटै पाप लहै सुख धाम।
रामदास फिर उदयराम, दुइ भण्डारी हैं सरनाम।
एक प्रभू को दास सुदाम, मन्दिर में रहै आठो जाम।
गरीबदास और हाँथोराम, दक्षिन देस प्रगट है नाम।
केशोदास रहै गुजरात, दिक दृष्टि कहैं सच बात।
इसफाहाबाद मो हृदय राम, बहुत जीव का कीन्हें काम।
रामदास काबुल में रहैं, करामाती सब कोई कहै।
मोहनदास रहै मुलतान, तिनको प्राप्त ब्रह्म का ज्ञान।
सीता कायल से पूरनदास, आवै साधु सो करैं विलास।
भबुऐ रहैं विहारी दास, मलूक चरण को तिनको आश।
केते शिष्य महन्त दरबार, तिनका नाही मिले सुमार।
एहि विध सभही के हितकारी, औगुन मेटि देहिं सुख भारी।
दुखिया को दुख मेटि कै, सबकी पुरवै आस।
गुरु मलूक की परिचयी, गावै सुथरा दास ॥
काल दुकाल परै जब आई, सदावरत देहि अधिकाई।
बीस बरस तक अकबर रहा, तिन साधुन सो कछु नहिं कहा।
तिनके पाछे भयो जहगीरा, करते अदल हरैं पर पीर।
शाहजहाँ तिनके सुत राजा, तिन फिर बहुत गरीब निवाजा।
औरङ्गजेब ताहि सुत एका, बैठि राज तिन्ह किये विवेका।
काल रूप बादशाह होय बैठा, बूझन भा उछहो घर पैठा।
शाहिजहाँ सुत औरङ्गजेब, चलै पंथ कुरान की तेव।
बेद पुरान मनै करवावै, बाभन पूजा करै न पावै।
काजी मुल्ला की करै बड़ाई, हिन्दू को जजिया लगवाई।
हिन्दू डाँण देई सब कोई, बरस दिना में जैसा होई।
ज' लग स्वाँगी स्वाँग बनाए, बादशाह सब तुरत मिटाए।
नग्र कोटि की कला बिचारा, कला न देखी मड़ी उदारा।
तब बहुरो मथुरा चली आवा, पाखंड देखि मंदिर ढहवावा।
काशी मो देवल विस्तारा, कला न देखी मठै उदारा।
द्वारिका माँह तुरक पठावा, रनछोर को अस्थल ढहवावा।
बद्रीनाथ गोकुलहि उजार, जगन्नाथ को किये तिरसकार।

बहुरि निकट मन मांहि विचारा, परशुराम देवलहि उदारा।
ठाकुर ते कोइ अधको नाहीं, होन हार उपजै मन माँही।
ता पाछे सब भेप बिचारा, काके माह प्रीत अधिकारा।
पहिले अपने भेष न सोचा, कछू न देखा मानो पोचा।
नागे दुई एक तुरुक फकीरा, गरदन मारी गनी न पीरा।
यह सुन सबै फकीर डेराना, सीधे चलै न भाषैं ग्यान।
पहिले जीदे तुरुक बुलाए, आलस[1] पुन तिन में कह पाये।
दूजे संन्यासी अधिकारी, उनका मन ते दियो उतारी।
तीसरे भेद जोगी को लीन्हा, उनहू संका मन में कीन्हा।
चोथो जगम मन नहि आये, पंचये जती सब झूठे पाये।
औ पुनि पंडित सबै बुलाय, कहैं भिखारी आपु छोड़ाये।
लाल वैरागी तजो शरीरा, मन में बहुतै मानी भोरा।
नरायन दास शिष्य भगवाना, उन्है बुलाये पकरि दिवाना।
दया भई देखी सुनि नाम, ताको फेरि पठायो धाम।
नानिक के सिखन को बूझा, गुरु का धर्म न तिन में सूझा।
डरे शरीर छोड़ो हरि राई, तेग बहादुर प्रगटे आई।
बादशाह तेहि पकड़ हँकारो, कला हीन तोही करि डारो।
यह विधि हिन्दू, तुरुक विचारा, सांच बिना फोकट व्योहारा।
झूठे ही संसार पुकारै, मलूक को बादशाह हँकारै।
वार दई मलूक न सुनी, तब मन में मिलवे को गुनी।
औरङ्गजेब इह मत ठहराई, तब बजीर सौं कहा बोलाई।
अहदी तीन कड़े को जावैं, भगत मलूका को लै आवैं।
फाजिल कहै कुफुर बहु करै, किसहू क संका नहि धरै।
करे ताकीद सितावै जावै, जादूगर को पकड़ लै आवै।
तीन चले कोरमो? आये, कुंअरसेन मजमानी लाये।
राति भई दुई मर गये, एक कड़ा में दाखिल भये।
दरदमंद है फतह खान, दरश किये मलूक को आन।
बहुत अदब सो बिनती कीन्हो, दस्तक लै के आगे दान्ही।
बादशाह ने कीन्हा याद, काहू ने कीन्हो फरियाद।
अहदी डेरा सरांय में दीन्हा, मलूक मिलाप शाह सो कीन्हा।
जहाँ गमी काहू की नहीं, गुप्तहि गये मलूका तहहा।

---

१. अल्लाह—पाठान्तर

बादशाह उन देखी जबहीं, कहा मलूक फकीर है हमहीं ।
लेने को जो अहदी गये, तिस वास्ते हम हाजिर भये ।
बादशाह तब आदर दीन्हा, अंतरीछ प्रभु आसन कीन्हा ।
पूछौ जो कुछ इच्छा होई, नीसा? करैगे ठाकुर सोई ।
सुनते बचन छोभ मन माखा, खाना मगाइ तब आगे राखा ।
फूल चंबेली का भयो खाना, बादशाह मनमाहि रिसाना ।
माँगा खान लै आयो फूला, हुकुम हमारा किया अदूला ।
हजरत खाना पुन मैं लाई, सीर फकीर कि कीन्हीं चाही ।
देखत खाना होय गयो खाका, शाह कहा जोभी से चाखा ।
फूँकत खाक उड़ी जेऊ आँधी, थालिन ही सो वहु विधि बाँधी ।
भया अँधेरा कछु नहि सूझै, बेगम बादशाह से बुझै ।
कहा हमारा ना तुम माना, करामाती देखा अब जाना ।
मक्के को बैर शाह ने माँगी, लाये तुरत बार नहिं लागी ।
आसन सतउ माने पानी, फकीर नहीं यह आफत आनी ।
सीस नवाये विनती करी, छिन माँही सगरी दुख हरी ।
अभी तोबा दिलही मो कीजै, किसी फकीर को दुख न दीजै ।
औरङ्गजेब ने तोबा कीन्हीं, दक्षिन देश मलूका दीन्हीं ।
तत्वदरसी ताके मन आये, मिटी कल्पना सांचु के पाये ।
साँच देख ताका मन माना, माला तिलक सो उत्तिम बाना ।
दुरमति सगरी साधु मिटाई, छोड़ो द्रोह दया मन आई ।
तब अहदी को लिख परवाना, मलूका एक रङ्ग हम जाना ।
पाँच सतर लिखलेखा दीन्हा, महल मोहर ताऊपर कीन्हा ।
पहर अढ़ाई यों होइ आए, उहाँ चरित्र बहुत देखलाये ।
प्रातः उठि तब अहदी आवा, जोर हाथ तब विनती लावा ।
तब मलूक लेखा वहि दीन्हा, परवाना माथे धर लीन्हा ।
अपदी भेंट फिर बहुत चढ़ाई, दीन्ह बाँट बैरागिन खाई ।
फिर फिर अहदी पायन पड़े, दास मलूक बिदा तब करे ।
आसन से कबहूँ नहिं हिले, कैसे बादशाह सो मिलें ।

मिल आये हैं शाह सो, कहै सबै संसार ।
कहैं सूथरा जो सुनै, जानै सिर जन हार ॥

यह कीरत प्रगटी जग मांहीं, हरि की कृपा अचम्भा नाहीं।
जुग जुग वेद पुरानन गाई, जन को यश करतार बढ़ाई।
समय पाय कोइ पूछे हरिजन, महाराज यह संसा है मन।
आसन छोड़ कतहुँ नहिं गये, कहै मिलाप शाह से भये।
महाराज यह कैसे होई, महिमा तुम्हरी लखै न कोई।
कहैं मलूक सुनौ हो साधू, हरि को कहूँ कछू नहिं बाधू।
कीट आदि ब्रह्मादिक राजा, एकै से सब जग उपराजा।
सब की खबर आपु हरि लेई, विन उनमान पूरन कर देई।
सबै रहै ना आज्ञाकारी, ताको सोच कहा करौ भारी।
जनके हेतु आपु तनु धारै, पल मांही सब काज सवारै।
तिन अपनी महिमा दिखलाई, दया करी विश्वास दृढ़ाई।
तिनही अपनो विरद बढ़ायो, दया करी सब जगत जनाई।
यह कुछ अधिक राम ते नांही, राम राम सुमिरै मन मांही।
भक्तवछल को पुनियो भाई, बादशाह दियो लिखा पढ़ाई।
भगत मलूक कुतुब जेऊ तारा, है एक रंग राम का प्यारा।
ताके द्वार बजार जा होई, ताको जजिया लेइ न कोई।
दुखित गरीब परासो होई, काहू को दुख देय न कोई।
लेखा देख हाकिम मनमाना, साँच बात सबहिन ने जाना।
भक्त कीर्तन नित प्रति होई, द्वारे भूखा रहै न कोई।
दुखिया रोगी जो कोइ आवै, औषद दै औ दिद लगावै।

सब विधि सब प्रतिपाल कर, सब को करहि समोध।
निरगुन सगुन जे साधु जन, होइ सबन को बोध॥

यहि विधि सबकी सेवा करहीं, चित्त उदास कछु लखे न परहीं।
मन उदास भावै बहु बारा, अब तजि कै चलिये संसारा।
कबहुक आसन कबहुक बागा, कबहुक बिलवहि नदी तड़ागा।
जहँ बैठे एकांत कछु पाई, खोज यात्री तहवाँ आई।
पान मिठाई तहाँ बिकाई, चढ़ै भेंट बैरागी खाई।
कबहुक साधु सभा में कहै, अब इहाँ रहना भला न अहै।
राजहि बहुत अनीत सुहाई, बंदि बेद चहुँ दिशा कराई।
परजा दया धर्म से हीना, भाई बहिन को नाता छीना।
एक दिना ऐसी मन आई, सब लोगन ते कहा सुनाई।

अब हम तजन चहत हैं देहा, झूठे सुत वित झूठे ग्रेहा।
पूजो अवधि कछु दिन रहे, पाल विधि भरि सो दिन बहे।
यह बानी बैरागिन सुनी, जहं जहँ गये तहाँ तहं गुनी।
देश देश के शिष्य जहाँ लौं, पूजा भेंट लै चले तहाँ लौं।
सहजै छिन्न भई शरीरा, कहै न कछु देही के पीरा।
औषधि जुगती कछु नहिं करैं, अपनी इच्छा सों आचरैं।
चंदन और कुमकुम कस्तूरी, सो शरीर लेपैं भरपूरी।
ऊंचे बसतर ऊँचे आसन, बैठा करै उत्तम सिंहासन।
भोजन मिस्री अनेक मंगावैं, देखि आपु पुनि संत जेवावैं।
साधु कहैं प्रभु तुमहू पावहु, कहैं मलूक नहीं अहै चाहू।
कहैं सो जन हम कैसे खाई, जो तुमहू कछु जेवहु नाहीं।
बचन साधु को लीन्हो मानी, प्रीत भाउ करि सबके जानी।
तबतें दाल भात को पानी, घूंट तीन अचवै मनमानी।
कछु दिन बीते सोऊ त्यागा, हरि सो अधिक बड़ो अनुरागा।
आगे कोई बैठै नाहीं, मूंदे नैनन रहैं सदाहीं।
द्वारे अतिथ करै कीरतन, शब्द सुनत चलि जाय सुरत मन।
द्वारे निकट रहन नहिं पावैं, होम शोर सो नाहिं सुहावैं।
कहैं दूरि बैठे एकन्ता, तहाँ विहार करैं सब संता।
भ्राता को सुत राम सनेही, ताहि बोलाय कहै करि एही।
चादर फेटा आपन लीन्हीं, इनके सीस बाँधि कर दीन्हीं।
माला कंठी तिलक मंगावा, दया करी हित सो पहिरावा।
थिरू को फिरि लियो बुलाई, तिनके हाँथ दीन्ह पकराई।
यह लरिका है हमका प्यारा, एकपलक छिन करौ न न्यारा।
बेमुख सिख होइ आपुहि आपा, तेहि कारन हम तुमको थापा।
गुर बालक का देख लपटियो, बोली झूठ जगत ठग खइयो।
तिन पापिन सब जग पतिआई, गुरबालक लख निकट न जाई।
पाखंडी की पूजा होई, साँच शब्द मानै नहिं कोई।
अपुनि सिख सपनेहु नहिं भये, और न सिख करन बहु गये।
यहां अघोर नर्क पुर वासी, गुर बालक की करै जो हाँसी।
तिन ते अधम और नहिं होई, गुर बालक मानहि नहिं जोई।
दान जगी तीरथ बहु करै, गुर को निन्दक तर्क मो परै।

मया लगी गुर निन्दा करिहै, ताते अधम अधो गति परिहै ।
कहैं मलूक तुम सुनहु सनेही, बेमुख सिख माया पद नेही ।

पाखंडी जग पूजि हैं, कलयुग का परभाउ ।
गुर मुख गुर मरजाद जे, तिनके गहिये पाउ ।।

महाराज बोझा है भारी, कैसे हमसो जाय सवारी ।
जेउ डाड़ी का खोखा होई, तिसका खते राखि है सोई ।
सनेही सशय चित मत धरौ, चरन माँग तिलक प्रभु करौ ।
गुरू निरंजन अविगत मेरा, इच्छा पाल सोई प्रभु तेरा ।
चक्र सुदर्शन आज्ञाकारी, सो रहता तुम्हरो रखवारो ।
भक्ति करै जो हरि गुन गावै, ताके दुष्ट निकट नहिं आवै ।
गुर बालक का जे ना मानो, ते नर जम के हाँथ बिकानो ।
ताते गुर की सेवा कीजौ, अपनो तन मन अरपन दीजौ ।
गुर का सेवक त्रिभुवन सारा, गुर का बालक अलख अपारा ।
गुरू हमारा साथ तुम्हारो, जैसे गाई को बछवा प्यारो ।
कहत मलूक तुम सुनहु सनेही, रखवारे तुम्हरे सब येही ।
हरीदास शिष्य दीवाना, कितने किये रंक ते राना ।
बैठ रासि मंडल पर रहो, चारिखो खंड की बाते कहो ।
गुन प्रगट बाते सब माही, तिन से छिपा कहूँ कछु नाहीं ।
उन्हने आगे ही कहि राखा, महन्त सनेही को कहि भाषा ।
कृष्ण सनेही बेटा होई, इनसे सरस होइगा सोई ।
एहि थापा बात सो सोई, तेहि निंदै दुख पावै सोई ।
गुर मलूक के आज्ञा आई, आगम बानी कहेव सुनाई ।
लालदास सिख मस्ताना, हरिदास के तौन समाना ।
रोटि खाहि गनी नहिं जाई, पीवत दही न कबहु अघाई ।
रहै सरूप में मगन सदाही, देंह खबरि जिनको कछु नाहीं ।
कड़ा माहिं गंगा में परो, शृंगार चंद तिन बाहर करो ।
सहर आगरा जमुना तीरा, लालदास तहाँ खडा फकीरा ।
शाहजहां नवारा खेला, लालदास ने मारा हेला ।
गये नवारे के ढिग जबही, लोन्हा ऐंच नाव पर तबहीं ।
जनु घिर अहदी अरजी बूझा, तिनके पास न कागज सूझा ।
मुट्ठो भरि कै मोहर लीन्ही, बादशाह हाथ कर दीन्हीं ।
देखा और चोभ सों चाखौ, एक एक जमुना मों नाखौ ।

तीती मीठी कछु है नाहीं, यह कहि कै डारी जल मांही।
बादशाह तब मेवा लीन्हा, लालदास के आगे कीन्हा।
ठाढ़े ठाढे सब तिन्ह खावा, फिर कूदा जमुना मो आवा।
गया तरवारे लोग पछितावा, बादशाह तब जाल डलावा।
एक पहर तक जल में रहा, निकसा दूर शब्द यह कहा।
गुप्तहि फेरि कड़ा मों आये, काहू से कछु कहि न जनाये।
सहज सुभाउ कला बहु करौ, मन अभिमान न कबहू धरौ।
श्राप अनुग्रह है सब लायक, गुर मरजाद लिय सुख दायक।
राम सनेही के ढिग आयो, आदर कीन्हीं कंठ लगायो।
कहा तुम्हार हम अज्ञाकारी, जो मलूक कहैं ब्रतधारी।
अधीनदास पटने का वासी, तन मन वचन मलूक उपासी।
पूजा भेंट बहुत कुछ लावा, श्री मलूक को माथा नावा।
कहा सनेही के ढिग जावो, पूजा लै सब उन्हें चढ़ावो।
कहा कि हम है उन्ही माहीं, उनसे कबहु जुदे हैं नाहीं।
अधीनदास भक्त एक रङ्गो, मलूक चरण के निजु सतसंगी।
सीख अनेकन बहुत महन्ता, को वरनै कोइ लहै न अंता।
रामसनेही सब पर राजा, गुर मलूक जेसि माहि विराजा।

रामसनेही आपु सम, दीन्हा तत्व लखाये।
तिनकी सरबर को करै, जहाँ विराजे आये॥

रामसनेही बैठे पाटा१, घर बाहर को लागे नीका।
जो कोई कांछो जैसो आवै, समाधान कै ताहि पठानै।
सारङ्गदास महंत बैरागी, भक्त मलूका को अनुरागी।
अभिलाषा सो आयो सोई, मिलि परसपर बैठो दोई।
जहां तहाँ चरचा यह मची, कहैं मलूक बात सो सांची।
प्रभु को आज्ञा हमको आई, अब हम चलन चहत हैं भाई।
सारङ्ग विनय करो सो मानी, प्रीति भाउ अन्तर का जानी।
महाराज तब कीन्ही ऐसी, आदि अनादि होइ आई जैसी।
जो मन हता सोई पद लहौ, एहि विध श्री मलूक जी कहौ।
करनहार प्रभु आपुहि आपा, गुर मलूक जी प्रगटहि थापा।
रामसनेही पाट बैठाये, सारङ्गदास प्रेम सुख पाये।
दास मलूका कड़ा को वासी, निजु धाम को चलन चहासी।
गया पुरुष खबर करि आवा, देश देश के यात्री धावा।

भोर भई कड़े मो आई, खाली जगह मिलै न भाई।
राम सनेही पूजा लेई, निसा दिलासा सब को देई।
गद्दी तकिया आसन कीन्हा, प्रभु जो डेरा बाहर लीन्हा।
पाँच मास बीते यहि भाँती, डाटैं रहैं सबै दिन राती।
बीता चैत बैशाख जब लागा, तब मलूक जो खीरा माँगा।
आगरे सो खीरा मंगवाये, बारह दिन यहि भाँति बिताये।
लीन्हीं फाँक जीभ सो चाखी, फेरि वही बरतन में राखी।
यह प्रसाद जिनही जिन खावा, जो मन उपजा सो तिन पावा।

संवत सत्रह सै वंतालिस, बुधवार दिन आई।
चतुर्दसी बैशाख बदी, ले सीखा लगन बिताई॥
समाधान सब को किये, नाना रूप दिखाय।
गुरु मलूक निज धामु को, चले निशान बजाय॥

जाति कुटुम्ब करै सब शोका, शिष्य साधु प्रेम बस लोगा।
सेत पीत वस्त्र बहु आने, चंदन अगर कुम कुम कहु साने।
पान फूल फुलेल मगवाये, उत्तम भाँति विवान बनाये।
साधु संग को जुरो समाजा, करहिं कीरतन बाजहिं बाजा।
साहु महाजन इष्ट सब भलो, लै बिवान गंगा को चलो।
अतर गुलाव छिड़क बहु देहा, मानो भादौ बरसै मेहा।
महकी गली सुगंधक वासा, उठी गंध सुर लोक निवासा।
डोडा मखाना और बतासा, लाची दाना खेरी पासा।
भर भर मूठी देहि लुटाई, जो पावै तृप्त हो जाई।
एहि भाँती पैसन को बोरी, सबै लुटावै चारों ओरी।
गंगा दरसी शीश नवाई, साठ हाँथ गंगा बढ़ आई।
गंगा तट बिवान लैगये, नाउ मगाई चढ़ावत भये।
कियो प्रवाह गंगा की धारा, सब संतन कियो जै जै कारा।
बहुत लोग कूदे जल मांहीं, थाह भई कोई बूड़े नाहीं।
कछुक दूरी तक दिखा बिवाना, बहुरि भयो सो अंतर ध्याना।
करि स्नान धाम सब आये, लोक रीत सब कुटुम्ब कराये।
चढ़ी कराही पाक बनायो, राम सनेही सबन जेवायो।
भोजन मिष्ट अनेकन भांती, जेवहि विप्र और सब जाती।
सत्रह दिन एही विधि दीन्हीं, आज्ञा भई सो क्रिया कीन्ही।
गऊ मगाई विधवत नीकी, विप्रन दीन्ह जो जेहि जी की।

जेहि विध सेवा पहिले होई, रामसनेही करते सोई।
कछुक मास एहि भांत विताई, बहुत समग्री जमा कराई।
चीनी घीउ भरे बहु मांटा, बसतर और पिसाये आंटा।
पोस्ता अफीम भङ्ग की बोरी, जो देखै सो नाहीं थोरी।
देश देश को पत्र पठायो, सब साधुन को खबर जनायों।
एहि बिधि गये मास चिल आठा, बड़े महोछा कीन्हें ठाटा।
माघ मास को किया बिचारा, सुन सुन शिष्य चले गुरद्वारा।
जुरा मक्र को मेला आई, ताकी महिमा कहि न जाई।
बहुत नहाये अमावस आये, तिन्ही महंतन ठौर दिवाये।
चले नहाइ कड़े के पन्थनि, प्रोत भाउ जिन रहे महन्तनि।
जा कोइ आवै राखैं तेही, मन भावत को भोजन देहीं।
वसंत पंचमी को कछु चले, आइ कड़े मेला मो मिले।
अचला सातैं को सब आये, करि सनमान सबै बैठाये।
चिघरिया संजोगी जेते, जहाँ तहाँ ते आये तेते।
और जेते कृष्ण उपासी, क्या जोगी औ क्या संयासी।
तुरुक मिलापी जे मलूक को, ते आये बैठे सलूक को।
सबहिन को नीके आदरहीं, भाव सहित सो सेवा करहीं।
पोस्ता अफीम तमाखू भांगा, जो चहै सो पावैं नागा।
हाकिम शिष्य सबह सो कहौ, सीधा लै भूखा जनि रहौ।
एक पाख भर लोला ठानी, होइ कौतुहल औ शुभ वानी।
भई एकादशी साधुन्ह मानी, कोई व्रत कोई मन ग्यानी।
तिल गुड़ शक्कर कंद जुरि आये, सो साधुन्ह लोन्ही मन भाये।
क्रीड़ा करै रहस मन ठानी, चतुर्दसी तिथि आइ तुलानी।
ता दिन घ्रित को पाका पाये, जिम जिम बाढ़ै बढ़ैं सवाये।
प्रातहि चन्द्र ग्रहण सब भाखैं, ता दिन हू मन संशय माखैं।
ताके भोर वस्त्र पहिनाये, जो जेहि लायक सो तिन्ह पाये।
शाल पांवरी पटुका लोई, धोती चदरी फेटा जोई।
गजी कामरी नीचीं ऊँची, यथा योग सबहीं को पहुँची।
तीन लाख और अस्सी हजारा, बैराग रूप का भयो सुमारा।
भयो शंख ध्वनि जै जै कारा, सब साधू मिलि चलन बिचारा।
राम सनेही कहैं कर जोरी, सुनौ साधु एक बिनती मोरी।
आज ही सब मिल जैहो जहां, खान पान जूरि अइहै तहाँ।

एक दुइ महन्त नित सब चलौ, जहाँ बसहु तहां आनन्द करौ।
इहाँ बोझ कहूं कछु नाही, जो कोइ रहै सो भोजन खाहीं।
सबहि कही सत राम सनेही, दास मलूक धरे जनु देही।
होइ होइ बिदा साधु सब जाहीं, जो कोई रहै सो भोजन पावहिं।
एहि विधि दिन पाँच मो जेते, विदा भये जित कित को तेते।
ईश्वर साधु एकही रूपा, ताको जस को कहै अनूपा।
श्री मलूक भगनी सुत जोई, पुन मलूक को शिष्य है सोई।
प्रीति सहित तिन परिचइ भाषी, गुर मरजाद सुनी चितु राखी।

देखी सुनी कही अब, बरनी प्रेम हुलास।
छाप परी साधुन मा, गावैं सुथरादास॥

रामसनेही के बड़े भाई, तिन्ह को प्रभु जी खबरि जनाई।
ठाकुर द्वारे को तुम आवो, आइ समाधि इहां बनवावो।
घु टीले मो जागह पाई, जगन्नाथ जी आपु देवाई।
राजा पंडा सब मिलि आये, लिआ बिवान तहाँ बैठाये।
तीसरे दिन ठाकुर पट खोला, राज हाँथ जोरत तब बोला।
जो प्रभु जी तुम आज्ञा कीन्हा, सो हम सब माथे धर लीन्ही।
भाजो और आम नीम्र जेती, मलूक चउरे को पहुँचे तेती।
राजा कही सो पंडन मानी, राजा बहुर गयो रजधानी।
बहुत दिन बीते घरे बिवाना, आई सिताब करौ अस्याना।
मीठा कुआं मूंद जो राखा, सो तुमसे हम प्रगटै भाषा।
मूंग भात भोजन करवावो, पुरी भरे मों सबन जेवावो।
आधी रात सुना यह बानी, वैस्नोदास के मन ठहरानी।
प्रातहि आये भाई के पासा, सुनहु सनेही रात तमासा।
बाबा जी ने हम सो कही, अचरज बात सुनहु तुम सही।
बैस्नो दास चरित्र सुनाये, राम सनेही बहु सुख पाये।
कहा कि वेग करौ तुम सोई, बाबा जी की आज्ञा जोई।
मिली बैठे दूनहू भाई, कंठी माला बहुत मंगाई।
अधीन दास तहं पहुँचे आई, सुखदेव दास को लिया बुलाई।
बैस्नो दास पूरब चले भाई, तुमका इनके साथ भेजाई।
दुइ हजार रहे गुर भाई, चले साथ सब आज्ञा पाई।
नहाइ त्रिवेनी उतरे पारा, करैं कीर्तन जै जै कारा।
राजा परजा दर्शन आवै, पूजा भेंट रसोई लावै।

भोजन साधु अनेकन पावैं, जहां तहां से उठि उठि धावैं ।
यही भाँति पहूँचे जब काशी, भोर भई सुमिरै अविनासी ।
सबै कहैं मलूक जी आये, भाग्य बड़े घर दर्शन पाये ।
बहुतक लोग उठे संग लागी, क्या ग्राही और क्या वैरागी ।
छाजन भोजन सब मिल पावौ, ठाकुर अपनी कला बढ़ावौ ।
एहि विधि पहुँचे पटने माँहीं, किसी बात का बाधा नाहीं ।
सबै लोग दर्शन को आवैं, करैं बड़ाई राजी जावैं ।
राज महल मो जब इन गये, बहुतक लोग शिष्य तह भये ।
जगन्नाथपुर पहुँचे जाई, २ाम मलूक की फिरी दोहाई ।
तहाँ बजार बड़ा अति नीका, सुखी लोग सबही विधि जीका ।
बहुतक थके बड़ाई करते, ठाकुर द्वारे को तब पहुँचे ।
दरसन किये बिवान के, पीताँबर पहिराये ।
उमगा प्रेम अपार अति, नैन रहे जल छाये ॥
भये लोग सब चित्र की नाई, रहे सबै मुख बात न आई ।
बैठे ठाढ़े घूमे साथी, जैसे मस्त फिरै जनु हाथी ।
ऐसी भई अवस्था इनकी, प्रेम बिवस कोलखैन जी की ।
कछुक बेर में कछु सुधि आई, सब गूंगे कछु कह न बुझाई ।
प्रेमु अथाह बहुत जन कावे, थोड़े ठहरे बहुतक उवे ।
प्रेम कथा नहिं कहे सिराई, ताते कछु संक्षेप सुनाई ।
धीरज धरयो बचन उचारा, कीरत इनको अपरम्पारा ।
सकल समग्री बहुत मँगाई, लिया बिवान समाधि बनाई ।
राज मजूर बनावन लागै, देहि बहुत कछु वो नहिं मांगैं ।
बालू टारत निकसा कुआँ, बाँध बाध आ प्रगट हुआ ।
गंगा जल सम ताका पानी, सीतल मीठा साधु बखानी ।
तेही जल सो भा परसाद, जेवे साधु करहिं सब नादा ।
सगरी पुरी मो नेवता दीन्हा, संत महन्त मान सो लीन्हा ।
चढ़ी रसोई बहु विस्तारा, साधु अनेकन पाक उतारा ।
छोटे संत दास तहँ आये, बालक दास समीप बैठाये ।
ठाकुर बटुआ ले ले आये, शंख नाद करि भोग लगाये ।
बैस्नोदास कह सुनौ महन्ता, पंगति बैठहि जेवहिं संता ।
त्रिपित भये सबै पुरवासी, पूरन यग्य कियो अविनासी ।
संत महन्त लीन्ह सब साथा, जगन्नाथ को नायो माथा ।

आदर कर पंडन सब लीन्हा, रस खोरा प्रसाद बहु दीन्हा।
कहैं कि धन्य मलूकजी स्वामी, जिनके सुत हैं ऐसे नामी।
भेष पुरी में जहँ लग आवा, पूरन होय प्रसाद सब पावा।
जोगी जंगम जती संयासी, नागे जितने तुरुक उदासी।
जहँ लग भूखे माँगन आये, भोजन पूरन सबहिन पाये।
आपहि आपु लुटावहि लोई, कैसो नाही घटै रसोई।
जगन्नाथ जी आज्ञा कीन्हा, टुकड़ा भोज समाधि दीन्हा।
खेमदास औ सकल महन्ता, घू टीले पर आये संता।
आये समाधी थापना कीन्हा, वित उनमान दान तंह दीन्हा।
वैस्नोदास हांय तब जोरा, सबै संत चितये तेहि ओरा।
यथा शक्ति तब पूजा कीन्हा, संत महन्त मान सो लीन्हा।
कहैं धन्य तुम दोनो भाई, भक्ति अखन्ड तुम्हारी पाई।
तुम्हरी संतत कड़े मो रहई, और न कोई ऊपर परई।
आशिर्बाद सबहिं मिल दीन्हा, वैस्नोदास हृदय धरि लीन्हा।

साधु वचन जुग जुग प्रगट, बृथा न कबहूँ होइ।
श्री कृष्ण गीता कही, मेटि सकै न कोइ।

जुग जुग साधु बचन परवाना, श्री मुख आपुहि कहियो बखाना।
होनिहार जो कबहू नाहीं, सो साधू कीन्हीं छिन माँहीं।
भूसी का घाट वंग जो राजा, दुइ महूरति माहि नेवाजा।
गउतम के दमरी खाये दोऊ, वसि श्रीवास देखे पुन सोऊ।
बालमीक सिंगी रिष जैसो, अगस्त आदि को वरणो कोसे।
जाति हीन उत्तम एहि देखो, साधु बचन तें ब्रह्मन लेखो।
जाते बचन हती सब माना, साधु कहै सो होइ निदाना।
प्रीत सहित साधु पहिं आवैं, मनवांछित फल तुरतै पवैं।
जाके मन जस कामना होई, साधु दया कर देते सोई।
सत संगति का बड़ा महात्म, जीव लहै पद दरसे आतम।
वेद पुरान गीता मो भाषा, गुर मरजाद सबन ने राखा।
गुर मलूक की उत्तम जाती, पुजन जोग तुमहु हरि भांती।
तुम्हरी सिख जो कोई आवौ, बिन थापे आदर तेहि पावौ।
तुम तो साक्षात हौ वोही, जल तरंग दुइ नाहीं होई।
चारि सम्प्रदा प्रगटे जानौ, नीगुरे होइ सो तुम्है न मानो।
मिले परसपर धीरज दीन्हा, वैस्नोदास विदा घर कीन्हा।

चारी अतिथ चारि फल भाखा, तिन्हि समाधी टहल को राखा ।
सब साधुन से कहा सुनाई, इनकी तुमहौ राजहि भाई ।
सब मिल बात मान इन लीन्ही, तब यह कूंच कड़े को कीन्हीं ।
संत दास को कहा बुलाई, समाधी पूजौ मन चित लाई ।
भूख प्यास ताको नहि लागै, गुर सेवा में जो कोइ पागो ।
लीन्ही बचन सत्य कर मानी, ताही भांति की सेवा ठानी ।
सुखदेव दास दक्षिन को गये, बहुत अतिथ लाये संग दये ।
कोसम बजार करि आये आपा, अधीनदास को तहवाँ थापा ।
पूरब देश तुमहि हम दीन्हा, भेद अभेद सबै कह दीन्हा ।
पटने आये किया विलासा, बहुत जीव की पुरई आसा ।
फिर कै आपहि आये काशी, सुन कर सुखी भये पुरवासी ।
देखन का उभरे नर नारी, बहुते भीर भई तहँ भारी ।
वहाँ ते चले प्रयाग में आये, बेनी जी को दरसन पाये ।
कड़ा आनि मिले दोउ भाई, प्रीति सहित लिये उर लाई ।
हरषित भये सबै नर नारी, रहैं परसपर आज्ञाकारी ।
सेवा साधु होई बहु भाँती, गिने न कोई दिन और राती ।

रात दिना जानै नहीं, सेवा साधु कराहि ।
दरसन को आवै सबै, केते लोग सिहाहि ॥
सोलह सौ इकतीस मा, प्रगट भये संसार ।
सत्रह सौ बनतालिस मा, कूच किया संसार ।
मारग अलख बेअन्त है, शेष न सकहि संभार ।
श्री मलूक को परिचय, मन बुद्धि परे विचार ॥
देखी सुनी अनुभव कही, अपनि मति उनमान ।
महिमा अगम अपार अति, जाने श्री भगवान ॥

चयनिका

(संत मलूकदास की वाणी)

★

सम्पादक

डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित

चयनिका

अब मैं सतगुरु पूरा पाया ।
मन तें जनम जनम डहकाया ॥१॥
कई लाख तुम रंडी छांड़ी, केते बेटी बेटा ।
कितने बैठे सिरदा करते, माया जाल लपेटा ॥२॥
कितने के तुम पुत्र कहाये, केते पित्र तुम्हारे ।
गया बनारस कर कर थाके, देत देत पिंड हारे ॥३॥
कई लाख तुम लसकर जोड़े, केते घोड़े हाथी ।
तेऊ गये बिलाय छिनक में, कोई रहा न साथी ॥४॥
आवागवन मिटाया सतगुरु, पूजी मन की आसा ।
जीवन मुक्त किया परमेसुर, कहत मलूकादासा ॥५॥
हमारा सतगुरु बिरले जानै ।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै ॥१॥
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता ।
की तो नामदेव औ नानक, की गोरख अवधूता ॥२॥
हमरे गुरु की अद्भुत लीला, ना कछु खाय न पीवै ।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै न जीवै ॥३॥
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला ।

छिन में रूप अनेक धरत है, छिन में रहैं अकेला ॥४॥
बिन दीपक उंजियारा देखै, एड़ी समुंद थहावै ।
चींटी के पग कुंजर बांधे, जा को गुरू लखावै ॥५॥
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै ।
सोई सिष्य गुरू का प्यारा, सूखे नाव चलावै ॥६॥
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई ।
कहै मलूक ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई ॥७॥

नैया मेरी नीके चलन लागी ।
आंधी मेंह तनिक नहि डोलो, साहु चढे बड़भागी ॥१॥
रामराय डगमगी छोड़ाई, निर्भय कड़िया लैया ।
गुन लहासि की हाजत नाही, आछा साज बनैया ॥२॥
अवसर पड़े तो पर्बत बोझै, तहूँ न होवै भारी ।
धन सतगुरु यह जुगत बताई, तिन की मैं बलिहारी ॥३॥
सूखे पड़े तो कछु डर नाहीं, ना गहिरे का संसा ।
उलटि जाय तो बार न बांके, या का अजब तमासा ॥४॥
कहत मलूक जो बिन सिर खेवै, सो यह रूप बखाने ।
या नैया के अजब कथा, कोइ बिरला केवट जानै ॥५॥

अवधू का कहि तोहि बखानों ।
गगन मंडल में अनहद बोलै, जाति बरन नहिं जानों ॥१॥
अहो अहो मैं कहा कहों तोहि, नांव न जानों देवा ।
सुन्न महल की जुगती बतावे, केहि बिधि कीजे सेवा ॥२॥
तीरथ भरमै बड़े कहावे, बाद करत हैं सोंई ।
अंधधुंध चलजात निरंजन, मर्म न जानै कोई ॥३॥
अविगत गति तुम्हरी अविनासी, घट घट रहत चलाया ।
जहां तहां तेरी माया खेलै, सतगुरु मोहिं लखाया ॥४॥
वेद पढ़े पढ़ि पंडित भूले, ज्ञानी कथि कथि ज्ञाना ।
कह मलूक तेरी अद्भुत लीला, सो काहू नहिं जाना ॥५॥

एक तुम्हें प्रभु चाहौं राज ।
भूपति रंक सति नहिं पूछों, चरन तुम्हार संवारयो काज ॥१॥
पांचों पंडव जरत उबारयो, द्रुपद सुता को राख्यो लाज ॥२॥
संत विरोधी ऐसो मारो, ज्यों तीतर पर छूटे बाज ॥३॥

तुम्हें छोड़ि जाने जो दूजा, तेहि पापी पर परि है गाज ॥४॥
कहें मलूक मेरी प्रान रमइया, तीन लोक ऊपर सिरताज ॥५॥

तेरा मैं दीदार दिवाना ।
घड़ी घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहेब रहमाना ॥१॥
हुआ अलमस्त खबर नहिं तन की, पिया प्रेम पियाला ।
ठाढ़ होउं तो गिर गिर परता, तेरे रंग मतवाला ॥२॥
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घर का बंदाजादा ।
नेकी की कुलाह सिर दीये, गले पैरहन साजा ॥३॥
तसबी और निमाज न जानूं, ना जानूं घरि रोजा ।
बांग जिकर तबही से बिसरी, जबसे यह दिल खोजा ॥४॥
कहैं मलूक अब कजा न करिहों, दिल ही सो दिल लाया ।
मक्का हज्ज हिये में देखा, पूरा मुरसिद पाया ॥५॥

दर्द दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा ।
एक अकीदा लै रहे, ऐसे मन धीरा ॥१॥
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी ।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी ॥२॥
उनकी नजर न आवते, कोई राजा रंक ।
बंधन तोड़े मोह के, फिरते निहसंक ॥३॥
साहेब मिल साहेब भये, कछु रही न तमाई ।
कहैं मलूक तिस घर गये, जहं पवन न जाई ॥४॥

मेरा पीर निरंजना, मैं खिजमतगार ।
तुहीं तुहीं निस दिन रटौं, ठाढ़ा दरबार ॥१॥
महल मियां का दिलहि में, ओ महजिद काया ।
छूरी देता ज्ञान की, जबतें लौ लाया ॥२॥
तसबी फेरौं प्रेम की, हिया करौं निवाज ।
जहं तहं फिरौं दिदार को, उसही के काज ॥३॥
कहै मलूक अलेख के, अब हाथ बिकाना ।
नाहीं खबर वजूद की, मैं फकीर दिवाना ॥४॥

अब की लगी खेप हमारी ।
लेखा दिया साह अपने को, सहजै चीठी फारी ॥१॥
सौदा करत बहुत जुग बीते, दिन दिन टूटी आई ।

अब की बार बेबाक भये हम, जग की तलब छोड़ाई ॥२॥
चार पदारथ नफा भया मोहि, बनिजे कबहुँ न जइहौं ।
अब ठहकाय बलाय हमारी, घर ही बैठे खइहौं ॥३॥
बस्तु अमोलक गुप्तै पाई, ताती बायु न लाग्रो ।
हरि हीरा मेंरा ज्ञान जौहरी, ताही सों परखाग्रों ॥४॥
देव पितर ग्रौर राजा रानी, काहू से दीन न भाखों ।
कह मलूक मेंरे रामे पूंजो, जीव बराबर राखौ ॥५॥

क्या प्रपंच यह पंच रचा ।

ग्रासा तृष्ना सब घट व्यापी, मुनि गंधर्व कोई न बचा ॥१॥
उठे बिहान पेट का धंधा, माया लाय किया जग ग्रंधा ॥२॥
तन मन छीन कटुम्बे लाया, छिप रही ग्राप लोग भर्माया ॥३॥
ग्रौंधी खोपरी फिरै बिचारे, भूले भक्ति छुग्रा के मारे ॥४॥
बिनती करत मलूकादासा, थकित भया तेरा देख तमासा ॥५॥

राम नाम क्यों लीजै मन राजा ।

काहु भाँति मेरे हाथ न ग्रावै, महा बिकट दल साजा ॥१॥
कई बार इन पेंड़े चलते, लस्कर लूटा मेरा ।
चहुँ जुग राज बिराजी करता, ग्रदब न मानै तेरा ॥२॥
येही सब घट दुन्द मचावै, मारै रैयत खासी ।
काहू नृप को नजर न ग्रानै, एते मान मवासी ॥३॥
कह मलूक जिय ऐसी ग्रावै, छल बल करि येही गहिये ।
इसहि मार काया गढ़ लेके, तब खासे घर रहिये ॥४॥

हम से जनि लागे तू माया ।

थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया ॥१॥
ग्रपने में है साहेब हमरा, ग्रजहूँ चेतु दिवानी ।
कहू जन के बस परि जैहौ, भरत मरहुगी पानी ॥२॥
तर ह्वै चिते लाज करूँ जनका, डारू हाथ की फाँसी ।
जन ते तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल ग्रबिनासी ॥३॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, ग्रोगुन राखु दुराई ।
जो जन उबरै राम नाम कहि, ताते कछु न बसाई ॥४॥

माया के गुलाम, गीदी क्या जाने बंदगी।
साधुन से घूम घाम, करत चोरन के काम।
द्विजन को पूजा देय, गरीबन से रिन्दगी ॥१॥
कपट को माला लिये, छापा मुद्रा तिलक दिये।
बगल में पोथी दाबे, आयो फरफन्दगी ॥२॥
कहत मलूकदास, छोड़ दगाबाजी आस।
भजहु गोबिन्द राय, मेटें तेरी गन्दगी ॥३॥

जा दिन का डर मानता, सोइ बेला आई।
भक्ति न कीन्हीं राम की, ठकमूरी खाई ॥१॥
जिनके कारन पचि मुवा, सब दुख की रासी।
रोइ रोइ जन्म गंवाइया, परी मोह की फांसी ॥२॥
तन मन धन नहि अपना, नहिं सुत औ नारी।
बिछुरत बार न लागई, जिय देखु बिचारी ॥३॥
मनुष जन्म दुर्लभ अहै, बड़े पुन्ने पाया।
सोऊ अकारथ खोइया, नहिं ठौर लगाया ॥४॥
साधु संगत कब करोगे, यह अवसर बीता।
कहै मलूका पाँच में, बैरी एक न जीता ॥५॥

राम मिलन क्यों पइये, मोहि राखा ठगवन घेरि हो।
क्रोध तो काला नाग है, काम तो भरघट काल।
आप आप को खैंचते, मोहि कर डाला बेहाल हो ॥१॥
एक कनक और कामिनी, यह दोनों बटपार।
मिसरी की छुरी गर लाय के, इन मारा सब संसार हो ॥२॥
इनमें कोई ना भला, सब का एक बिचार।
पैंड़ा मारैं भजन का, कोइ कैसे कै उतरे पार हो ॥३॥
उपजत बिनसत थकि पड़ा, जियरा गया उकताय।
कहैं मलूक बहु भरमिया, मो पर अब नहिं भरमो जाय हो ॥४॥

इन्द्री खाय गयी जग सारा।
निस दिन चरा करे बन काया, कोई न हांकनहारा ॥१॥
पीवै रक्त करै तन झंझरा, सरबस जाय नसाई।
जैसी भाँति काठ घुन लागै, बहुरि रहै फोकलाई ॥२॥
होवा बीज औंट के लोहू, सो देंही का राजा।

ऐसो वस्तु । अकारथ खोवै, अपना करै अकाजा । ॥३॥
मनुवा मार भजै भगवन्तहि, या मति कबहुं न ठाना ।
जियरा दुइ घरी के सुख को, कहत मलूक दीवाना ॥४॥

अजब तमासा देखा तेरा । ता तें उदास भया मन मेरा ॥१॥
उतपति परलय नित उठ होई । जग में अमर न देखा कोई ॥२॥
माटी के पुतरे माया लाई । कोई कहे बहिन कोई कहे भाई ॥३॥
झूँठा नाता लोग लगावै । मन मेरे परलीत न आवै ॥४॥
जबहीं भेजै तबहिं बुलावै । हुकुम भया कोइ रहन न पावै ॥५॥
उलटत पलटत जग की अंचली । जैसे फेरे पान तमोली ॥६॥
कहत मलूक रह्यो मोहि घेरे । अब माया के जाऊं न नेरे ॥७॥

बाबा मुरदे मूंड उठाया ।
लागा अंग बाय दुनिया की, राम राम बिसराया ॥१॥
आये पहिरि करम की बेड़ी, हाथ हाथ करि गाढ़ी ।
फूले फिरैं जनु अमर भये हैं, प्रीति बिषय सों बाढ़ी ॥२॥
काहू के मन चार पाँच को, काहू के मन बीस ।
काहू के मन सात आठ की, सब बाँधे जगदीस ॥३॥
अब भये सौतिन हाथ केरे, घर बीघा सौ कीन्ह ।
मेरी मेरी कहि उमर गवाई, कबहुँ राम ना चीन्ह ॥४॥
दिना चार के घोड़ सोड़े, दिना चार के हाथी ।
कहत मलूका दिना चार में, बिछुरि जायँगे साथी ॥५॥

मुवा सकल जग देखिया, मै तो जियत न देखा कोय हो ।
मुवा मुई को ब्याहता रे, मुवा ब्याह करि देय ।
मुए बराते जात हैं, एक मुवा बधाई लेय हो ॥१॥
मुवा मुए से लड़न को, मुवा जोर ले जाय ।
मुरदे मुरदे लड़ि मरे, एक मुरदा मन पछिताय हो ॥२॥
अन्त एक दिन मरोगे रे, गलि गुलि जैहैं चाम ।
ऐसी झूठी देह तें, काहे लेत न साँचा नाम हो ॥३॥
मरने मरना भांति है रे, जो मरि जाने कोय ।
राम दुवारे जो मरे, फिर बहुरि न मरना होय हो ॥४॥
इनको यह गति जानिके, मै जहँ तहँ फिरौं उदास ।
अजर अमर प्रभु पाइया, कहत मलूकदास हो ॥५॥

अवधू याही करो बिचार ।
दस अवतार कहाँ ते आये, किन रे गढ़े करतार ॥१॥
केहि उपदेस भये तुम जोगी, केहि विधि आतम जारा ।
केहि कारन तुम काया सताइ, केहि विधि आतम मारा ॥२॥
थोथे बांट बाँधि के भोंदू, येहि विधि जाव न पारा ।
ऋद्धि सिद्ध में बूड़ि मरोगे, पकड़ो खेवनहारा ॥३॥
अगल बगल का पैंड़ा पकड़ा, दिन दिन चढ़ता भारा ।
कहत मलूक सुनो रे भोंदू, अबिगत मूल बिसारा ॥४॥

नाम हमारा खाक है, हम खाकी बन्दे ।
खाकहिं ते पैदा किये, अति गाफिल गन्दे ॥१॥
कबहुँ न करते बन्दगी, दुनियाँ में भूले ।
आसमान को ताकते, घोड़े चढ़ि फूले ॥२॥
जोरू लड़के खुस किये, साहेब बिसराया ।
राह नेकी की छोड़ि के, बुरा अमल कमाया ॥३ ।
हर दम तिसको याद कर, जिन वजूद संवारा ।
सबै खाक दर खाक है, कुछ समुझ गंवारा ॥४॥
हाथी घोड़े खाक के, खाक खानखानी ।
कहैं मलूक रहि जायगा, औसाफ निसानी ॥५॥

अब तो अजपा जपु मन मेरे ॥टेक॥
सुर नर असुर टहलुवा जा के, मुनि गंधर्व जा के चेरे ॥१॥
दस अवतार देखि मत भूलो, ऐसे रूप घनेरे ॥२॥
अलख पुरुष के हाथ बिकाने, जब तें नैन निहारे ॥३॥
अविगत अगम अगोचर अवधू संग फिरत हैं तेरे ॥४॥
कह मलूक तू चेत अचेता, काल न आवै नेरे ॥५॥

साधो भाई अपनी करनी नाहीं ।
जे करनी का करैं भरोसा, ते जम के घर जाहीं ॥१॥
ना जानूं धौं कहां मुए थे, ना जानूं कहं आये ।
ना जानू हरि गर्भ बसेरा, कौने भांति बनाये ॥२॥
महा कठिन या हरि की माया, या तें कौन बचावे ।
जौन कहै जड़ मूलहि त्यागी, तिन को हाथ लगावे ॥३॥
यह संसार बड़े भौसागर, प्रलय काल तें भारी ।

बूड़त तें या सोई बाचे जेहि राखै करतारी ॥४॥
लच्छ गऊ दे अन्न खात थे, राजा नृग से प्यारे ।
पुन्न करत जमा और गंवाई, ले गिरगिट के डारे ॥५॥
गौतम नारि बड़ी पतिबरता, बहुते कीन्हे दाना ।
करनी करि बैकुन्ठ न पैठी, काहे भई पषाना ॥६॥
मारहु मान छेम करि बैठो, छोड़ो गर्व गुमाना ।
आपा मेटो राम भजौ तुम, कहत मलूक दिवाना ॥७॥

आपा खोज रे जिय भाई ।
आपा खोजे त्रिभुवन सूझै, अंधकार मिटि जाई ॥१॥
जोई मन सोई परमेसुर, कोइ बिरला अवधू जाने ।
जौन जोगी सुर सब घट व्यापक, सो यह रूप बखाने ॥२॥
सब्द अनाहट होत जहाँ तें, तहां ब्रह्म कर बासा ।
गगन मंडल में करत कलोले, परम जोति परगासा ॥३॥
कहत मलूका निरगुन के गुन, कोई बड़भागी गावै ।
क्या गिरही और क्या बैरागी, जेहि हरि देय सो पावै ॥४॥

गर्व न कीजे बावरे, हरि गर्व प्रहारी ।
गर्वहि ते रावन गया, पाया दुख भारी ॥१॥
जरन खुदी रघुनाथ के, मन नाहिं सोहाती ।
जा के जिय अभिमान है, ता की तोरत छाती ॥२॥
एक दया और दीनता, ले रहिये भाई ।
चरन गहो जाय साध के, रीझै रघुराई ॥३॥
यही बड़ा उपदेस है, परद्रोह न करिये ।
कहैं मलूक हरि सुमिर के, भौसागर तरिये ॥४॥

ना वह रीझै जप तप कीन्हें, ना आतम को जारे ।
ना वह रीझै धोती टांगे, ना काया के पखारे ॥१॥
दाया करे धरम मन राखे, घर में रहै उदासी ।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिले अबिनासी ॥२॥
सहै कुसब्द बादहू त्यागै, छांड़े गर्व गुमाना ।
यही रीझ मेरे निरंकार की, कहत मलूक दिवाना ॥३॥

रस रे निर्गुन राग से, गावै कोइ जाग्रत जोगी ।
अलग रहै संसार से, सो (इस) रस का भोगी ॥१॥

भरम करम सब छांड़, अनूठा यह मत पूरा।
सहजै धुन लागी रहै, बाजै अनहद तूरा ॥२॥
लहरें उठती ज्ञान की, बरसे रिमझिम मोती।
गगन गुफा में बैठ के देखै जगमग जोती ॥३॥
सिव नगरी आसन किया, मुन ध्यान लगाया।
तीनो दसा बिसार के, चौथा पद पाया ॥४॥
अनुभय उपजा भय गया, हद तज बेहद लागा।
घट उजियारा होइ रहा, जब आतम जागा ॥५॥
सब रङ्ग खेले सम रहै, दुबिधा मनहि न आनै।
कह मलूक सोइ रावला, मेरे मन मानै ॥६॥

अब मैं अनहद पदहि समाना।
सब देवन को मर्म भुलाना, अविगत हाथ बिकाना ॥१॥
पहिला पद है देई देवा, दूजा नेम अचारा।
तीजे पद में सब जग बंधा, चौथा अपरम्पारा ॥२॥
सुन्न महल में महल हमारा, निरगुन सेज बिछाई।
चेला गुरु दोउ सैन करत हैं, बड़ी असाइस पाई ॥३॥
एक कहै चल तीरथ जइये, (एक) ठाकुरद्वारा बतावे।
परम जोति के देखे संतो, अब कछु नजर न आवै ॥४॥
आवागवन का संसय छूटा, काटी जम की फांसी।
कह मलूक मै यही जानिके, मित्र कियो अवनासी ॥५॥

सबहिन के हम सबै हमारे। जीव जंतु मोहि लगै पियारे।१।
तीनों लोक हमारी माया। अंत कतहुँ से कोइ नहि लाया।२।
छत्तिस पवन हमारी जात। हमहीं दिन और हमही रात।३।
हमहीं तरवर कीट पतंगा। हमहीं दुर्गा हमहीं गङ्गा।४।
हमहीं मुल्ला हमहीं काजी। तीरथ बरत हमारो बाजी।५।
हमहीं पंडित हमीं बैरागी। हमहीं सूम हमीं हैं त्यागी।६।
हमहीं देव औ हमही दानो। भाव जा को जैसा मानों।७।
हमहीं चोर हमहीं बटपार। हम ऊँचे चढ़ि करै पुकार।८।
हमहीं महावत हमहीं हाथी। हमहीं पाप पुन्न के साथी।९।
हमहीं अस्व हमहीं असवार। हमही दास हमहीं सरदार।१०।
हमहीं सूरज हमहीं चंदा। हमहीं भये नन्द के नन्दा।११।

हमहीं दसरथ हमही राम। हमरे क्रोध हमारे काम ।१२।
हमहीं रावन हमहीं कंस। हमहीं मारा अपना बंस ।१३।
हमहीं जियावें हमहीं मारें। हमहीं बोरें हमहीं तारें ।१४।
जहां तहां सब जोति हमारी। हमहिं पुरुष हमही है नारी ।१५।
ऐसी बिधि कोई लव लावै। सो अविगत से टहल करावै ।१६।
सहै कुसब्द और सुमिरै नांव। सब जग देखै एकै भाव ।१७।
या पद का कोइ करै निबेरा। कह मलूक मै ता का चेरा ।१८।

बाबा मन का है सिर तले।
माया के अभिमान भूले, गर्ब ही में गले ॥१॥
जिभ्या कारन खून कीये, बांधि जमपुर चले ॥२॥
राम जो सों भये बेमुख, अगिन अपनी जले ॥३॥
हरि भजे से भये निरभय, टारहू नहिं टरे ॥४॥
कह मलूका जहं गरीबी, तेई सब से भले ॥५॥

बन्दे दुनिया को दीन गंवाया।
सो दुनिया तेरे संग न लागी, मूढ़ अजाब चढ़ाया ॥१॥
कमर जो लागा बदी खलक की, किन तुझको फर्माया।
गुनहगार तू हुआ सरासर, दोजख बांध चलाया ॥२॥
खाक सेती जिन पैदा कीन्हा, सो साहेब बिसराया।
मोहकम मार पड़ी गुरजन की, तब कछु ज्वाब न आया ॥३॥
अब किसहूँ को दोष न दीजै, गंदा अमल कमाया।
कह मलूक जस खिजमत पहुंचा, सोई नतीजा पाया ॥४॥

दीन बन्धु दीना नाथ मेरो तन हेरिये।
भाई नाहिं बन्धु नाहिं कुटुम परिवार नाहिं,
ऐसा कोई मित्र नाहिं जाके ढिग जाइये ॥१॥
सोने की सलैया नाहिं रूपे का रुपैया नाहिं,
कौड़ी पैसा गाँठ नहीं जासे कछु लीजिये ॥२॥
खेती नाहिं बारी नाहिं बनिज व्योपार नाहिं,
ऐसा कोई साहूँ नाहिं जासों कछु माँगिये ॥३॥
कहत मलूकदास छोड़ दे पराई आस,
राम धनी पाय के अब का की सरन जाइये ॥४॥

सुपने के सुक्ख देख मोह रहे मूढ़ नर,
जानत हमारे दिन ऐसहि बिहायंगे ॥१॥
क्या करेंगे भोग अच्छी सुन्दरी रमेंगे नित,
छौंह को लै चारि जून खूंद खूंद खायेंगे ॥२॥
सीकरा सो काल है कलसरी सी लपेट लेहैं,
चंगुल के तरे दबे चिचयांयगे ॥३॥
कहत मलूकदास लेखा देत होइहै दुक्ख,
बड़े दरबार जाय अन्त पछितायंगे ॥४॥

जीती बाजी गुर प्रताप तें, माया मोह निवार।
कहें मलूक गुरु कृपा ते, उतरा भवजल पार ॥१॥
सुखद पंथ गुरुदेव यह, दीन्हों मोहि बताय।
ऐसो ऊपट पाथ अब, जग मग चलै बलाय ॥२॥
भ्रम भागा गुरुबचन सुनि, मोह रहा नहिं लेस।
तब माया छल हित किया, महा मोहनी भेस ॥३॥
ता को आवत देखि कै, कही बात समुझाय।
अब मैं आया हरि सरन, तेरी कछु न बसाय ॥४॥
मलुका सोइ पीर है, जो जाने पर पीर।
जो पर पीर न जानहीं, सो फकीर बेपीर ॥५॥
जहाँ जहाँ बच्छा फिरै, तहाँ तहाँ फिरे गाय।
कहैं मलूक जहां सन्त जन, तहां रमैया जाय ॥६॥
भेष फकीरी जे करै, मन नहिं आवै हाथ।
दिल फकीर जे हो रहे, साहेब तिनके साथ ॥७॥

जीवहुँ ते प्यारे अधिक, लागैं मोहीं राम।
बिन हरि नाम नहीं मुझे, और किसो से काम ॥१॥
कह मलूक हम जबहि ते, लीन्हों हरि को ओट।
सोवत है सुख नींद भरि, डारि भरम की पोट ॥२॥
उहां न कबहूं जाइये, जहाँ न हरि का नाम।
डीगंबर के गाँव में, धोबी का क्या काम ॥३॥
राम राम के नाम को, जहाँ नहीं लवलेस।
पानी तहाँ न पीजिये, परिहरिये सो देस ॥४॥

प्रेम नेम जिन ना कियो, जीतो नाहीं मैन ।
अलख पुरुष जिन न लख्यो, छार परो तेहि नैन ॥१॥
कठिन पियाला प्रेम का, पिये जो हरि के हाथ ।
चारो जुग माता रहे, उतरै जिय के साथ ॥२॥
बिना अमल आता रहै, बिन लस्कर बलवंत ।
बिना बिलायत साहेबी, अन्त माँहि वे अन्त ॥३॥
रात न आवै नींदड़ो, थर थर कांपे जीव ।
न जानूं क्या करैगा, जालिम मेरा पीव ॥४॥
करै भक्ति भगवन्त की, कबहुं करै नहिं चूक ।
हरि रस में राचो रहै, साँची भक्ति मलूक ॥५॥

जो तेरे घट प्रेम है, तो कहि कहिं न सुनाव ।
अंतरजामी जानिहै, अंतरगत का भाव ॥१॥
गुप्त प्रगट जेती करी, मेरे मन की खूम ।
अन्तरजामी रामजी, सब तुमको मालूम ॥२॥
माला जपो न कर जपो, जिभ्या कहो न राम ।
सुमिरन मेरा हरि करे, मैं पाया बिसराम ॥३॥

साधो दुनिया बावरी, पत्थर पूजन जाय ।
मलूक पूजै आत्मा, कछु माँगे कछु खाय ॥१॥
जेती देखे आत्मा, तेते सालिगराम ।
बोलनहारा पूजिये, पत्थर से क्या काम ॥२॥
आतम राम न चीन्हहीं, पूजत फिरै पषान ।
कैसहु मुक्ति न होयगी, कोटिक सुनो पुरान ॥३॥
किरतिम देव न पूजिये, ठेस लगे फुटि जाय ।
कहैं मलूक सुभ आत्मा, चारो जुग ठहराय ॥४॥
देवल पुजे कि देवता, की पूजे पाहाड़ ।
पूजन को जाता भला, जो पीस खाय संसार ॥५॥
हम जानत तीरथ बड़े, तीरथ हरि की आस ।
जिनके हिरदे हरि बसै, कोटि तिरथ तिन पास ॥६॥
हरी डारि न तोड़िये, लागै छुरा बान ।
दास मलूका यों कहें, अपना सा जिब जान ॥७॥

जे दुखिया संसार में, खोवो तिनका दुक्ख।
दलिद्धर सींप मलूक को, लोगन दीजै सुक्ख ॥८॥

पीर सभन की एक सी, मूरख जानत नाहिं।
काँटा चूभे पीर होय, गला काट कोऊ खाय ॥१॥
कुंजर चींटी पशू नर, सबमें साहेब एक।
काटे गला खोदाय का, करै सूरमा लेख ॥२॥
सब कोउ साहेब बन्दते, हिन्दू मुसलमान।
साहेब तिनको बन्दता, जिसका ठौर इमान ॥३॥
दया धर्म हिरदे बसै, बोलै अमृत बैन।
तेई ऊंचे जानिये, जिन के नीचे नैन ॥४॥
सब पानी की चूपरो, एक दया जग सार।
जिनपर आतम चीन्हिया, तेही उतरे पार ॥५॥

दाग जो लागा लील का, सौ मन साबुन धोय।
कोटि बार समझाइया, कौवा हंस न होय ॥
चार पहर दिन होत रसोई, तनिक न निकसत टूक।
कह मलूक ता मदिल में, सदा रहत हैं भूत ॥
दुखदाई सब तें बुरा, जानत है सब कोय।
कह मलूक कंटक मुवा, धरती हलकी होय ॥
माया मिसरी की छुरी, मत कोई पतियाय।
इन मारे रसबाद के, ब्रह्महिं ब्रह्म लड़ाय ॥
माया मगन महत के, तुम मत बैठो पास।
कौड़ी कारन लड़ि मरै, कथनी कथै पचास ॥
नारी नाहि निहारिये, करै नैन की चोट।
कोइ एक हरि जन ऊबरे, पारब्रह्म की ओट।
नारी घोटी अमल की, अमली सब संसार।
कोइ ऐसा सूफी ना मिला, जो संग उतरै पार ॥

जागो रे अब जागो भैया, सिर पर जम की धार।
ना जानूं कौने घरी, केहि लेजैहै मार ॥१॥
गर्व भुलाने देंह के, रचि रचि बाधे पाग।
सो देंही नित देखिके, चोंच सँवारे काग ॥२॥

सुन्दर देंही पाय के, मत कोइ करैं गुमान।
काल दरेरा खायगा, क्या बूढ़ा क्या ज्वान ॥३॥
सुन्दर देंही देखिके, उपजत है अनुराग।
मढी न होती चाम की, तो जीवत खाते काग ॥४॥
उतरे आय सराय में, जाना है बड़ कोह।
अटका आकिल काम बस, लो भठियारी मोह ॥५॥
जेते सुख संसार के, इकट्ठे किये बटोर।
कन थोरे कांकर घने, देखा फटक पछोर ॥६॥
इस जीने का गर्ब क्या, कहां देंह की प्रीत।
बात कहत ढह जात है, बारू की सी भीत ॥७॥
मलूक कोटा झांझरा, भीत परी भहराय।
ऐसा कोई ना मिला, जो फेर उठावै आय ॥८॥

आदर मान महत्व सत, बालापन को नेह।
यह चारो तबहीं गये, जबहिं कहा कछु देह ॥१॥
हरि रस में नाहीं रचा, किया कांच व्योहार।
कह मलूक वोही पचा, प्रभुता को संसार ॥२॥